Chapter 3

तृतीय-अध्याय

साठोत्तरी कविता की वस्तु-चेतना

कविता की वस्तु के अन्तर्गत एक ओर वे अनुभव आते हैं जिन्हें कवि जीवन के अनेक संदर्भों में हासिल करता है दूसरी ओर उन अनुभवों से अनुस्यूत जीवन दृष्टि भी वस्तु का एक महत्वपूर्ण अंग होती है। साठोत्तरी कविता की वस्तु पिछली कविता की वस्तु से बहुत कुछ बदली हुई है। कविता के लिए बहुत से वर्जित क्षेत्र और विषय इसमें पहली बार कविता की वस्तु बन सके हैं। साठोत्तरी कविता की वस्तु का अध्ययन करते समय इसमें अभिव्यक्त जीवन मूल्यों के बदलते संदर्भ, यथार्थबोध, राजनीतिक चेतना, सौन्दर्यबोध आदि का अध्ययन आवश्यक और समीचीन है।

जीवन मूल्यों के बदलते संदर्भ :-

यद्यपि दर्शन, धर्म, नीति, इतिहास, संस्कृति, कला, समाजशास्त्र आदि सभी ज्ञानशाखाओं के अपने निजी मूल्य हैं लेकिन ये समग्र जीवन के व्यापक मूल्यों से अन्तत: भिन्न नहीं हैं।[१] समाजशास्त्रियों के अनुसार मूल्य एक सामाजिक तथ्य है यह व्यक्ति और समाज के विचार

(१) 'जयशंकर प्रसाद: वस्तु और कला' - डॉ० रामेश्वरलाल खण्डेलवाल-पृ०४२३

अनुभव या क्रिया से सीधा जुड़ा हुआ है। "जीवन मूल्य जीवन की वे मान्यताएं हैं जिनके लिये व्यक्ति अथवा समाज हर प्रकार के मूल्य चुकाने (जिसमें कष्ट सहना और जान की बाजी लगाना भी सम्मिलित है) के लिये तत्पर रहता है। जिस जीवन-मूल्य के लिये जितना अधिक त्याग किया जाता है, जितने अधिक कष्ट उठाये जाते हैं वह उतना ही श्रेष्ठ और मूल्यवान होता है।"[1] जीवन -मूल्यों का बोध लेखक को तत्कालीन जीवन-संदर्भों से प्राप्त होता है।[2] जीवन -मूल्यों की समग्रता विचारधारा कही जाती है और इसका कविता की वस्तु से बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध होता है।

मूल्यों को व्यक्ति और समाज के आधार पर व्यक्तिगत और सामाजिक इन दो वर्गों में बांटा जाता है। कुछ विचारकों का विचार है कि मूल्य निर्णय हमेशा सामाजिक होता है व्यक्तिगत नहीं,[3] लेकिन यह धारणा प्रत्येक दशा में सच नहीं है। समाज में व्यक्ति की भी अपनी एक निजी सत्ता है अत: कुछ मूल्य समाज के हस्तक्षेप से परे होते हैं। आर०टी० हैरिस जैसे अनेक विचारकों ने मूल्य निर्णयों की वैयक्तिकता का समर्थन किया है अत: यह अस्वाभाविक नहीं है कि साठोत्तरी कविता की वस्तु का अध्ययन करते समय सामाजिक मूल्यों के साथ व्यक्तिगत मूल्यों पर भी दृष्टि डाली जाय।

वैयक्तिक जीवन-मूल्य -- प्रेम-सेक्स- व्यक्ति-स्वातंत्र्य --

साठोत्तरी कविता में व्यक्तिवादी स्वर बहुत मद्धिम है इसलिए वैयक्तिक मूल्यों का समर्थन उसमें बहुत कम है। प्रेम, सेक्स और व्यक्ति-

---

(१) 'बदलते जीवन-मूल्यों के संदर्भ में हिन्दी उपन्यास का विशेष अध्ययन' -- डॉ० वेदप्रकाश शर्मा- टंकित प्रति- पृष्ठ- ३७

(२) आज का हिन्दी साहित्य: संवेदना और दृष्टि-डॉ० रामदरश मिश्र-पृ०२३

(३) 'बदलते और उभरते प्रश्न'- डॉ० विश्वम्भरनाथ उपाध्याय- पृष्ठ- २४

स्वातंत्र्य को लेकर कुछ बातें कही गई हैं। प्रेम की पवित्रता और अतीन्द्रियता पर नयी कविता ने ही प्रश्नचिन्ह लगा दिया था लेकिन प्रेम को लेकर एक धुंधलापन उसमें बना हुआ था। आज प्रेम में विश्वास की गहरी नीवें हिल चुकी हैं उसके आकाश-तारे टूटकर धरती पर बिखर गये हैं आत्मोत्सर्ग की भावना आत्मरक्षा की स्वार्थ भरी कीच में समा गई है --

बड़ से -
हिल गयी हैं,
गहरी नीवें विश्वास की ;
- - - - - - - - - -
एक दूसरे के लिए
आन्तरिक प्रगाढ़ सम्मान का
जो अकलुष मन्दिर था
वह कब का धंस गया है-
क्षुद्र आत्मरक्षा की
स्वार्थभरी कीच में ।[१]

साठोत्तरी कवि ने प्रेम की परम्परागत अवधारणा को बहुत बड़ी चुनौती दी है। तथाकथित पवित्र और अशरीरी प्रेम के लिए आज कोई अवकाश नहीं है। प्यार का अर्थ आज भोग या सहवास है।२ प्रेम अब कोई

- -

(१) युग्म- विश्वास की नींवें- जगदीश गुप्त- पृष्ठ- २१२

(२) क- 'प्यार' शब्द घिसते-घिसते। चपटा हो गया है। अब। हमारी समझ में 'सहवास' आता है।
कo सoनo ६ - ममता अग्रवाल

ख- समवयस्का की छाती का उभार और मेरी। नयी-नयी मूछों का उगना। मीता के साथ मेरे खेलने का अर्थ बदल रहा है। वह जानती है या नहीं मैं उसे नंगा देखना चाहता हूं।
नाटक जारी है-- नगर का मौसम- लीलाधर जगूड़ी- पृष्ठ- ७४

सौभाग्य की चीज या वरदान नहीं है अपितु बैठे ठाले का शगल है। बहुत हुआ तो यह खालीपन को पूरने का माध्यम बन जाता है।१ युवा कवि का विचार है कि प्यार से बड़ा मुंह अब तक खोला ही नहीं गया।२ इसका अस्तित्व बर्फ के चाकू से अधिक नहीं है --

बस इतना याद है बर्फ के चाकू की तरह प्यार
एक बहुत बड़ा मजाक था
जो भीतर घाव कर
भीतर पिघल गया ३

साठोत्तरी कविता में जहां कहीं प्यार शब्द का प्रयोग हुआ है वहां अधिकतर संभोग अथवा सहवास के अर्थ में। प्यार को नकार कर उसने यौन तृप्ति या सहवास को एक मूल्य के रूप में प्रतिष्ठित किया है। प्रश्न यह उठता है कि क्या इस प्रकार की कोशिश 'जेनुइन' या 'प्रासंगिक' है? 'यौन भावना अथवा कामवृत्ति का मानव-जीवन में विशिष्ट स्थान है किन्तु उसे ही मानव जीवन की मूल परिचालिका शक्ति स्वीकार करना सर्वथा

- -

(१) जब - जब रिक्त होता हूं
प्यार करता हूं
यही एक शर्त है
जिन्दा रह जाने की
संक्रान्त-- प्यार करता हूं-- कैलाश वाजपेयी - पृष्ठ- १६

(२) क्यों कि प्यार से बड़ा मुंह
अब तक खोला ही नहीं गया
आंसू से ज्यादा नाटक
खेला ही नहीं गया
संक्रान्त- संदिग्ध सत्यों का वक्तव्य- कैलाश वाजपेयी- पृष्ठ- २१

(३) वही। -परास्त बुद्धिजीवी का वक्तव्य- कैलाश वाजपेयी-पृ० २

एकांगी दृष्टिकोण है जो सत्य के अनेक महत्वपूर्ण पहलुओं का अवमूल्यन करता है।'१ यह अच्छा है कि इस प्रकार की कविताएँ संख्या में कम हैं और प्रायः अकविता सम्प्रदाय के कवियों द्वारा ही लिखी गई हैं, किसी प्रबुद्ध समीक्षक ने इस प्रवृत्ति का समर्थन भी नहीं किया है। डॉ० रामदरश मिश्र ने इस प्रकार की रचनाओं की आलोचना करते हुए देह - भोग को आवश्यकता से अधिक उभारने के प्रयासों की कड़ी आलोचना की है।२ युवा कवियों ने अनावश्यक 'बोल्डनेस' दिखाते हुए अनेक स्थलों पर संभोग, हस्तमैथुन, वीर्यपात, स्वप्नदोष आदि के खुले वर्णन प्रस्तुत किए हैं। श्री रामशुक्ल की निम्न-लिखित कविता के संदर्भ में रामदेव आचार्य की यह टिप्पणी बिलकुल वाजिब है कि श्री शुक्ल शायद कविताएं इसलिए लिखते हैं कि बाल्मीक से लेकर अज्ञेय तक तथा चौसर से लेकर टी० एस० इलियट तक की काव्य परम्परा कलंकित हो जाय।३ ---

मेरी नींद खुल गई
आंखों के बीच एक अन्धेरा झांक रहा था
और मेरी अंगुलियां माखन से भरी थीं ४

- -

(१) राष्ट्र भारती मार्च- १९६७- लेख- मानव जीवन में यौन भावना'
-- डॉ० रामकुमार शुक्ल - -- पृष्ठ- १५६

(२) 'यौन-प्रसंगों में आने वाले देह-भोग को जहां कहीं भी आवश्यकता से अधिक उभारा गया है वहां रचना सौन्दर्य आहत हुआ है, देह-भोग का नग्न उपलापन एक भोंड़ी उत्तेजना के साथ रचना के आन्तरिक आलोक पर पसर गया है।'
-- अधुनातम परिवेश और सृजन की समस्याएँ- सं० नवलकिशोर आदि
लेख- यौन प्रसंग और साहित्य सृजन -डॉ० रामदरश मिश्र- पृष्ठ- ५०

(३) वातायन- ७ नवम्बर १९६६- -- पृष्ठ- ४१

(४) वही। वही पृष्ठ- ४१ से उद्धृत

कुछ साठोत्तरी कवियों का सेक्स के सामान्य उपभोग पर संतुष्टि का अभाव नहीं है/वे कुछ भिन्न और अतिरिक्त उत्तेजना चाहते हैं। महिला कवियों ने भी इस प्रकार की अनुभूति को व्यक्त करने में झिझक नहीं दिखाई है।१ लेकिन इतना निश्चित है कि महिला उपन्यासकारों में सेक्स को लेकर जितना खुलापन और जितनी उत्तेजना है उतनी इन कवियित्रियों में नहीं।

अजनबीपन, अकेलापन और मृत्युबोध की अनुभूतियां :-

हालांकि अस्तित्ववाद का प्रभाव नयी कविता का अन्त होते-होते चुक गया था फिर भी साठोत्तरी कविता में व्यक्ति-स्वातंत्र्य, अजनबीपन, अकेलापन, मृत्युबोध आदि अस्तित्ववादी स्वर सुनने को मिल जाते हैं। इनमें केवल व्यक्ति-स्वातंत्र्य को ही जीवन-मूल्य के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। एक युवा कवि भीड़ में अपने अस्तित्व को गुम न होने देने के लिए सचेष्ट है, उसमें अपने अस्तित्व की अलग पहचान बनाने की छटपटाहट सक्रिय है--

मैं आदमी बनकर जीना चाहता हूं
न कि एक क्रम - संख्या
और जो कुछ भी चाहता हूं कल नहीं
आज पीना चाहता हूं २

---

(१) सड़क से कोई भारी जुलूस नारे लगाता निकले
गोली चले, अश्रुगैस छोड़ी जाए
क्योंकि एकान्त में प्यार मुझे, कुछ
गलत लगने लगता है।
विचार कविता की भूमिका-- एक अन्तरंग प्रेमकथा- कमला शर्मा-पृ० २२२

(२) निषेध - जनतंत्र और मैं- कुमार विकल - -- पृ० १६५

जहाँ तक अजनबीपन, अकेलापन और मृत्युबोध की अनुभूतियों की अभिव्यक्ति का प्रश्न है, ऐसा लगता है ये अस्तित्ववादी प्रभाव न होकर परिवेश की भयावहता और कठिनता की प्रतिक्रियाएं हैं। यह जरूर है कि इनके पीछे निराशा और विवशता की मिली जुली जीवन दृष्टि विद्यमान है। टूटा हुआ कवि न तो अपने प्रतिबिम्ब को पहचान पा रहा है १ और न परिचयों और सम्बन्धों की भीड़ में वह अकेलेपन के बोध से मुक्त हो पा रहा है।२ जीवन के कितने ही पड़ाव तय कर लेने के बाद सबके लिए अजनबी बने रहने की अनुभूति वाकई बड़ी तल्ख है।३ चारों ओर प्रगति की हलचल है योजनाओं और भाषणों का शोरगुल है लेकिन इनकी वास्तविकता को पहचानने वाले को अ अकेलेपन के अतिरिक्त और कुछ प्राप्त नहीं होता --

और
अक्सर ऐसा होता है
कि भाषणों से भरी सभाओं
और प्रदर्शनों की भारी भीड़ों में
मैं अकेला होकर
साथ खोजने लगता हूं ४

- -

(१) हर तरह से टूट चुके हैं,
अपना ही प्रतिबिम्ब
हमें दिखाई नहीं देता
अपनी ही चीख
गैर की मालूम पड़ती है
गर्म हवाएं-- छीनने आये हैं वे-- सर्वेश्वर दयाल सक्सेना- पृष्ठ- २७

(२) इतने परिचय हैं। और इतने सम्बन्ध। इतनी बातें हैं। और इतना फैलाव। पर बार-बार लगता है। मैं ही रह गया हूं। छिछुड़ा हुआ दिन।
विजप- शेष - गंगा प्रसाद विमल - -- पृष्ठ- २७

(३) विचार कविता की भूमिका- जंगल में गुमे आदमी के नाम-रमेशकुंतल मेघ-पृ०१६३

(४) कविताएं- १९६४, देशप्रेम- दुष्यन्तकुमार - -- पृष्ठ- ६६

मृत्युबोध के स्वर युवा कविता में प्रवीण हैं। मृत्यु का आतंक प्राय: व्यवस्था के आतंक और क्रूरता की ओर इंगित करता है।१ ईमानदारी, परोपकार, सत्य और मित्रता आदि की गणना व्यक्तिगत मूल्यों के अन्तर्गत होती है। साठोत्तरी कवि ने इनके खंडित हो जाने की स्थितियों का वर्णन किया है। युवा कवि इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि आजके परिवेश में ईमानदारी दु:ख का कारण है और झूठ बोलना एक अनिवार्यता।२ कल तक अप्रमाणित कहे जाने वाले दुर्गुण आज के सर्वमान्य मूल्य बन चुके हैं। सत्य का आज के युग में उपहास किया जाता है। क्यों न हो `जिस समाज में सत् को दण्डित और असत् को पुरस्कृत कियाजाता हो वहां ये सब आचार के मूल्य अगर उलट जायें तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है।३

- -

(१) क- हम सब अपनी मृत्यु से बहुत पहले
मर गए हैं
और एक सारे रेगिस्तान में
हमें खड़े गाड़ दिया गया है
संक्रान्त-- पूर्व मृत्यु- कैलाशवाजपेयी - -- पृष्ठ- ७८

ख- दिन की हजारों घटनाएं
रात्रि की तिलस्मी विषमताएं
सन्देह असंख्य, निरन्तर
मृत्यु बनकर खड़ा है
यह शहर
हमारे ऊपर

(२) क- ईमानदारी। दु:ख का कारण है। मुझे विश्वास होगया है,।
बेईमानी के प्रति -
जूझते हुए- धारा प्रवाह - सुरेन्द्र तिवारी - पृष्ठ- ४२

ख- अगर मैं झूठ न बोलूं। तो सच मानिए। मैं देशी तराजू पर। घुन लगे अनाज का बोझ होता।
विचार- कविता की भूमिका- रोटी जो मेरी जुबान पर है-
-- गोविन्द उपाध्याय - पृष्ठ-१२०

(३) आधुनिक भावबोध की संज्ञा- अमृतराय- -- पृष्ठ- ६७।

सत्य का स्थान झूठ ने, सरलता का पाखंड ने, कर्त्तव्य का चाटुकारिता ने, न्याय का पक्षपात ने बड़ी सरलता से ले लिया है और कहने की आवश्यकता नहीं है कि यही आज के सर्वमान्य मूल्य हैं --

अतिरिक्त गुण और बेईमानी
प्रामाणित हो चुकी हैं।
दोहरा व्यक्तित्व, पाखण्ड, चाटुकारिता
प्रचार पक्षपात और उलझन
यहां के सर्वमान्य मूल्य हैं १

साठोत्तरी कवि ने वैयक्तिक जीवन-मूल्यों पर जब भी विचार किया है उन पर कड़ी चोट की है। उसका विचार है कि मौजूदा परिवेश में घिसे-पिटे और रूढ़िग्रस्त मूल्यों का कोई औचित्य नहीं है। उसके जीवन के चारों ओर जिस मौसम के बादल घहरा रहे हैं उनसे उपलवृष्टि की आशा ही की जा सकती है।

परम्परागत सामाजिक मूल्यों का विघटन :;-

युवा कविता जिस परिवेश में पैदा हुई है वह एक तरह से जीवन-मूल्यों की अराजकता का युग है "इसकी दिशा विघटन की ओर दशा आस्थाहीन भाव शून्य गतिरोध की है, यह सांस्कृतिक मूल्यों के संकट का समय है- - - - यह युग समस्याओं के बोध का है समाधान का नहीं"।२ संयुक्त परिवार का विघटन, बढ़ती हुई आर्थिक असमानता, राजनीतिक अस्थिरता और सांस्कृतिक अवमूल्यन के फलस्वरूप इस युग में पहले से स्वीकृत जीवन-मूल्यों के प्रति प्रारम्भ में संदेह व्यक्त किया गया तदुपरान्त उन्हें अनुपयोगी पाकर बिलकुल नकार दिया गया। इसके अतिरिक्त वैज्ञानिक प्रगति तथा मार्क्सवाद सरीखी भौतिक विचार धाराओं ने भी मूल्यों की परम्परा को अस्वीकार किया

- -

(१) कल्पना वर्ष १३ अंक ६-१९६२ तरसे हुए देश में- कैलाश वाजपेयी-पृष्ठ- ४३
(२) वातायन नवम्बर १९६६- डॉ० इगन मेहता - -- पृष्ठ- १३

और मानव को भौतिक कार्य-कारण शृंखला १ की कड़ी के रूप में माना। घर, गांव, नगर और देश के स्तर पर सामाजिक सम्बन्धों में आये परिवर्तनों ने भी पुराने मूल्यों का स्थानान्तरण करके उसके स्थान पर नये जीवन-मूल्यों को स्थापित किया है। सामाजिक मूल्यों के इस व्यापक परिवर्तन को साठोत्तरी कवि ने बड़ी सतर्कता के साथ देखा है।

सतीत्व, कौमार्य, शोषण, मातृत्व, श्रद्धा आदि का अस्वीकार :--

सामाजिक मूल्यों के विघटन और नयी मूल्य मर्यादाओं के उदय को रेखांकित करने के दौरान युवा कवि ने कभी समाज की थोथी नैतिकता[२] का जिक्र किया है तो कभी पारिवारिक जीवन के परिवर्तनों को लिपिबद्ध किया है। 'पुराने आदर्शों, मूल्यों और आस्थाओं का विघटन यों तो छायावादोत्तर काल के प्रारम्भ में ही शुरू होगया था, पर सन् १९६० के बाद तो यह अपनी चरम सीमापर जा पहुंचा'।३ युवा कवि पाता है मूल्यों में हुई उलटफेर के फलस्वरूप एक वेदपाठी और आर्मी कण्ट्रेक्टर में कुछ फर्क नहीं रह गया है।४

---

(१) साहित्य का नया परिप्रेक्ष्य- डॉ० रघुवंश -- पृष्ठ- ६

(२) ओढ़ी हुई, झूठी नैतिकता
भारी लबादा है
उसी के बोझ से
आदमी की सीधी चाल कुण्ठित हो जाती है,
कलुषित हो जाता है सहज रूप।
युग्म- मैं कहीं असामाजिक बना रहना चाहता हूं- जगदीश गुप्त-पृ० २८८

(३) हिन्दी साहित्य का इतिहास- सं० डॉ० नगेन्द्र-डॉ० बच्चनसिंह- पृ० ७३२

(४) क्या फर्क है वेद-पाठी और आर्मी कण्ट्रेक्टर में ?
दोनों की बेटियां 'ए' फिल्म देखती थीं
और दोनों भाग गई हैं।
एक उठा हुआ हाथ- परिदृश्य- १९६७- भारतभूषण अग्रवाल- पृष्ठ- ४६ ।

सभ्यता और तथाकथित आधुनिकता ने मनुष्य को इतना बदल दिया है कि अब उसे पहचानना बड़ा कठिन है।१ इसी प्रकार पारिवारिक मूल्यों में भी बहुत परिवर्तन हुआ है। न पत्नी के लिए पति परमेश्वर रहा और न पति के लिए पत्नी ही अर्द्धांगिनी के रूप में स्वीकृत रही। यौन विकृति का विस्फोट हो रहा है और उसके चलते पुख्ता रिश्ते बुरी तरह हिल गए हैं---

एक जिम्मेदारी की करवट बदलकर
चिपक जाती है पत्नी
और उसे प्यार करने के नाटक में
मैं अज्ञात प्रेमिकाओं के गले घोंट देता हूँ
हर रात।२

आज का कवि विवाहित जीवन को भोंड़ा, अनैतिक और फूहड़ मानकर सतीत्व, कौमार्य और पातिव्रत आदि मूल्यों को नकार रहा है। इस प्रकार की प्रवृत्ति अकविता आन्दोलन से जुड़े हुए कवियों में अधिक मिलती है। जगदीश चतुर्वेदी जैसे कवियों में परम्परा और शास्त्र के प्रति सम्पूर्ण अस्वीकृति का भाव मिलता है।३ बहुत से चिन्तकों ने सतीत्व, कौमार्य आदि को नकारने के साहस को चिन्ता की दृष्टि से देखा है। वास्तव में

- -

(१) और चाहे कुछ भी नहीं दिया सभ्यता ने
कम से कम यह तो किया है सभी को
बराबर अमानत बना दिया।
संक्रान्त-- पिशाच संस्कृति - कैलाश वाजपेयी- पृष्ठ- ६५।
(२) विजप - एक प्रतिबद्धता - जगदीश चतुर्वेदी - पृष्ठ- ७३।
(३) मुझे तुम्हारे ऋषियों द्वारा पारिभाषित नाम
शास्त्र की ठंडी नापाक हरकतों में नहीं उलझना
-- इतिहास हन्ता - अपने देश के लिए - पृष्ठ- ५६।

सतीत्व, कौमार्य,मातृत्व,पितृत्व आदि मूल्यों के संकट में पड़ जाने से लाभ की अपेक्षा हानियां अधिक हैं। डॉ० हुकम मेहता के शब्दों में "परिवार और दाम्पत्य जीवन के विघटन के कारण ममता विहीन परिस्थितियों में पलने वाले बालक बालिकाओं में समाज विरोधी संस्कारों के बीज पनप रहे हैं।१

साठोत्तरी कविता में आर्थिक सामाजिक शोषण के प्रति तीखी चेतना है। वह पूंजीपतियों, नेताओं, मठाधीशों द्वारा किये गए शोषण को नकार कर आर्थिक समानता, बन्धुत्व और सहयोग आदि मूल्यों पर बल देता है। शोषण के नये तरीकों और साजिशों से युवा कवि अनभिज्ञ नहीं है।२ अब वह किसी प्रकार के सुधार या संस्कार में विश्वास न करके आमूलचूल परिवर्तन का हामी है। यही कारण है कि वह क्रान्ति का आह्वान करता है। उसे विश्वास है कि अब व्यवस्था -परिवर्तन का सही समय आ चुका है --

वैसे भी अब वक्त आगया है कि पूरी
व्यवस्था के फट आये नेकर को
कोई अश्वस्त कैंची
नयी काट के कपड़े में
परिवर्तित कर दे, ३

आध्यात्मिकता युवा कविता में नहीं के बराबर है। रघुवीर सहाय,

- -

(१) वातायन १९६६ सृजन मूल्यांकन अंक- -- पृष्ठ- १२

(२) घात - विघ्रत कोखों से जन्मी हुई पीढ़ियां
जन्म से पूर्व जान जाती हैं कि वीणा
वादक नहीं, सिर्फ शिकारी बजाते हैं।
निषेध-- बंश - बेल - रमेश गौड़- -- पृष्ठ-१८५

(३) विचार कविता की भूमिका - तटस्थ - फ्लनकुमार - पृष्ठ-१९८

राजीव सक्सेना आदि जैसे कवियों ने प्रभु, पिता, आत्मा जैसे शब्दों का प्रयोग किया है लेकिन वे पूजा, अर्चना, श्रद्धा के भाव से नहीं बल्कि अपनी विचारधारा और परिवेश के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए है। अधिकतर युवा कवियों ने ईश्वर की सत्ता में संदेह किया है। डॉ० मंजु सिन्हा का विचार है कि "ईश्वर के प्रति यह अविश्वास सन् 60 के बाद जिस तरह बढ़ा है उतना पहिले नहीं था। साठ के पहले के कवि विद्रोही भले ही रहे हों, ईश्वर के अस्तित्व को उनका बुद्धिवादी दृष्टिकोण चाहे स्वीकार न करता हो लेकिन ईश्वर के अस्तित्व पर उन्होंने प्रश्न चिन्ह नहीं लगाया था"।१ यदि कैलाश वाजपेयी का विचार है कि "ईश्वर सा खोखला शब्द। दोबारा उगला नहीं गया।"२ तो दूसरी ओर जगदीश चतुर्वेदी भी ईश्वर पर विश्वास करने के लिए तैयार नहीं हैं --

> मुझे अब नहीं करना है विश्वास बदलते आकाश पर
> रिरियाते ईश्वर पर ३

अन्तर्राष्ट्रीयता और विश्वबन्धुत्व :-

मार्क्सवाद तथा अन्य आधुनिक विचारधाराओं के परिणाम-स्वरूप साठोत्तरी कविता में राष्ट्रीयता या देश भक्ति जैसे संकीर्ण मूल्यों के स्थान पर अन्तर्राष्ट्रीयता और विश्वबन्धुत्व के मूल्य विकसित हुए हैं। बहुत से युवा कवियों ने अपने देश के वर्तमान स्वरूप को देखते हुए उसके प्रति घृणा प्रदर्शित की है अर्थात देश भक्ति के मूल्य का तिरस्कार किया है। कैलाश वाजपेयी की कविता "तरसे हुए देश में"; इस देश में पानी पानी तक शुद्ध न मिलने, बुद्धजीवियों के अयुयाश होने और विदूषकों के

---

(१) स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी और गुजराती की नयी कविता- पृष्ठ- ११३
(२) संक्रान्त - संक्लित कृत्यों का वक्तव्य - -- पृष्ठ- २१
(३) निषेध - निकृति - --- पृष्ठ- ३२

हाथ में शासनतंत्र के होने पर खुद को भारतीय कहने में लज्जा का अनुभव किया गया है।१ देश भक्ति के प्रति वीतश्रद्ध होने का क्रम स्वतंत्रता के बाद शुरू होता है --

सारे देशी शरीर के भीतर
पता नहीं मुझसे क्या गलती होगयी है
कि आजादी के बाद
देश भक्ति

मेरे कंधे से सिर टिकाकर सो गयी है।२ कुछ कवियों ने अपने बेहद आक्रामक लहजे में हिन्दुस्तान को जो इज्जत बख्शी है ३ वह एकांगी और अनास्थावादी जीवनदृष्टि को स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त है। ऐसा नहीं है कि साठोत्तरी कविता में देशानुराग का स्वर बिल्कुल अनुपस्थित ही है। रामदरश मिश्र, विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, नीलाभ आदि कवियों ने देश की तमाम बदसूरती के बावजूद उसके प्रति अपना लगाव प्रदर्शित किया है। ऐसे स्थलों ४ को

---

(१) कल्पना १९६२ वर्ष १३ अंक-६ -- पृष्ठ- ४३

(२) नाटक जारी है- इस व्यवस्था में- लीलाधर जगूड़ी -- पृष्ठ- ५५

(३) हिन्दुस्तान तुम्हारा शरीर सदियों के कोढ़ से बिंधा है
हट जाओ मेरे सामने से पिचके कपाल
मैं तुम्हें देखकर शर्म से झुक जाता हूं।
--इतिहास हन्ता-- अपने देश के लिए - जगदीश चतुर्वेदी- पृष्ठ- ५५

(४)क- ये काइयों भरे ताल। ये टूटे हुए कुंए। ये ही सब मेरे हैं। लेकिन दूर के सागर पर मैं कब तक भटकता रहता। अपनी कटी-फटी धरती को छोड़कर। कब तक पराये आकाश में टंगा रहता -
-- विचार कविता की भूमिका-- लौट आया हूं- रामदरश मिश्र-पृ०१५८

ख- मुझे जीने दो। जीने दो। मैं जीना चाहता हूं। इस भयानक अंधेरे में भी जीना चाहता हूं। आखिरी यातना तक।
-- कल्पना ७१ वर्ष २२ अंक-१, जिजीविषा- विश्वनाथ प्रसाद तिवारी पृष्ठ-१६

ग- कैसे कहूं मेरा कोई नहीं है देश। कैसे कहूं मेरी कोई नहीं है भाषा। परिभाषा। परिवेश। अर्थ।
-- संस्मरणारम्भ- चटकीले बादलों के साथ- नीलाभ - पृष्ठ-८७

समय से पिछड़ा हुआ दृष्टिकोण कहकर टाला नहीं जा सकता। वास्तव में उग्र वामपंथ की अन्तर्राष्ट्रीयता और प्रतिक्रियावादी व दक्षिणपंथी संकीर्ण राष्ट्रीयता की अतिवादी छोरों से बचकर भारत के बौद्धिक अब राष्ट्रीयता और देश भक्ति आदि प्रश्नों पर गंभीरता से सोचने लगे हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि युवा कविता में भारतीय सामाजिक जीवन में हुए मूल्यगत परिवर्तन की अच्छी समझ विद्यमान है। कुल मिलाकर युवा कवि की चारित्रिक मुद्रा परम्परागत मूल्यों के अस्वीकार की है। अनेक घटनाओं, परिस्थितियों और यातनाओं ने उसके पुराने विश्वासों को झकझोर कर रख दिया है।१ वह पुरानी मान्यताओं के स्थान पर अशोषण, क्रान्ति, नैतिक मूल्यों का अस्वीकार आदि धारणाओं को स्थापित करने के लिए प्रयत्नशील है।

विविध सामाजिक जीवनमूल्यों की स्थिति:-

साठोत्तरी मानव संक्रान्त युग का मानव है। यदि परम्परा नैतिकता और आदर्शों का रक्त उसके शरीर में है, तो परिवेशगत दबाव की अनुभूतियां उसके दिल तथा दिमाग में है। आज परिवेश की भयावहता के कारण प्राचीन मान्यताओं, रीतिरिवाजों, तथा आदर्शों को भारी धक्का लगा है। कवि ने प्राचीन मूल्यों को अस्वीकार कर दिया है परन्तु नये मूल्य स्थापित करने के नाम पर वह द्वन्द्व का शिकार हो जाता है। हमारी परम्पराएं, नैतिक मान्यताएं आज अनेक रूढ़ियों से ग्रस्त हो चुकी हैं परन्तु इससे भी इनकार नहीं किया जा सकता कि उसमें आज भी अनेक जीवन्त तत्व हैं जिनसे पश्चिमी देश

---

(१) अदालत के झूठे मुकदमे
मानवीय मूल्यों के प्रति
मेरी आस्था को कुतर गए हैं -
मेरे विश्वासों में दीमक लग गई है
सुबह होने से पहले - अंधा युग और उखड़े हुए लोग
-- सव्यसाची -- पृष्ठ- २

भी समय-समय पर प्रभावित होते रहे हैं। हमारी परम्परा ने हमें कुछ जीवन-मूल्यों के साथ सुदृढ़ सामाजिक व्यवस्था दी थी। साठोत्तरी कवियों ने उन जीवन मूल्यों को तोड़ा है, उनको अस्वीकार किया है। यदि कोई व्यवस्था समय के साथ पंगु हो जाये तो उसे अस्वीकार करना आवश्यक है परन्तु कोई नयी व्यवस्था भी स्वीकार की जानी चाहिए। साठोत्तरी कविता में जीवन-मूल्यों के प्रति विद्रोह तथा अस्वीकार का स्वर मुखर है। नये मूल्य गढ़ने में तथा उसे समाज द्वारा स्वीकृति मिलने में अभी देर ही लगती है। मुक्तिबोध के शब्दों में "जो पुराना है, अब वह लौटकर नहीं आ सकता। लेकिन नये ने पुराने का स्थान नहीं लिया। धर्म भावना गई, लेकिन वैज्ञानिक बुद्धि नहीं आई। धर्म ने हमारे जीवन के प्रत्येक पक्ष को अनुशासित किया था। वैज्ञानिक मानवीय दर्शन ने, वैज्ञानिक दृष्टि ने धर्म का स्थान नहीं लिया। इसलिए हम केवल अपनी अन्त: प्रवृत्तियों के यंत्र से चालित हो उठे। उस व्यापक उच्चतर सर्वतोमुखी मानवीय अनुशासन की हार्दिक सिद्धि के बिना हम "नया"-"नया" चिल्ला तो उठे, लेकिन वह नया क्या है -- हम नहीं जान सके। क्यों? नया जीवन, नये मानमूल्य, नया इनसान परिमाणहीन और निराकार हो गए। वे दृढ़ और व्यापक मानसिक सत्ता के अनुशासन का रूप धारण न कर सके। ~~वे परम्परा न बन सके~~। वे धर्म और दर्शन का स्थान न ले सके।"[१]

आज का बुद्धिजीवी दोहरी जिन्दगी जी रहा है। एक ओर वह पश्चिमी चिन्तन से प्रभावित है तो दूसरी ओर वह अपने संस्कारों, रूढ़ियों तथा मान्यताओं से जकड़ा हुआ है। जीवन-मूल्यों में इस अस्पष्टता का कारण है कि जिन्दगी के स्तर पर आज आदमी भारी तनाव का अनुभव कर रहा है। मूल्यों में आज बिखराव है। अभी भारतीय समाज को देखना है कि उसकी परिस्थितियां तथा विदेशी जीवन-पद्धतियां उसके जीवन-मूल्यों को गढ़ने में कहां तक सहयोग दे पाती हैं। नया कवि नये जीवन मूल्यों को प्रतिष्ठित करने में क्रियाशील है।

(१) एक साहित्यिक की डायरी - पृष्ठ-७२

ख- साठोत्तरी कविता के राजनीतिक संदर्भ

साठोत्तरी कविता में राजनैतिक संदर्भों, प्रश्नों और घटनाओं का अच्छा खासा जुलूस सक्रिय है। साहित्य और राजनीति के आपसी सम्बन्ध पर वर्षों से चले आरहे विवाद को एक तरह से साठोत्तरी कवियों ने समाप्त कर दिया है। साहित्य को राजनीति से दूर रखने या राजनीति को साहित्य में अस्पृश्य मानने की बात अब नहीं रही। भले ही अज्ञेय जैसे पिछली पीढ़ी के रचनाकार कहते रहे कि 'सामाजिक(और विशेषतया साहित्यिक) वायुमण्डल का सबसे बड़ा दूषण आज राजनीति है।'१ जगदीश चतुर्वेदी जैसे अकवियों की यह मान्यता भी बेबुनियाद ठहराई गई है कि 'राजनीति एक गौण रूप में साहित्य का अंग हो सकती है, उसे प्रमुखता दी गई तो साहित्य मात्र 'नारा' या 'फैशन' बनकर रह जाएगा।'२ आज का कवि राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में गहरी दिलचस्पी रखता है और स्वयं को एक राजनीतिक व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत करता है। यही कारण है कि डॉ० भारतभूषण अग्रवाल ने आज की युवा कविता को एक राजनैतिक व्यक्ति की कविता कहकर सम्बोधित किया है। युवा कवि ऋतुराज भी किसी अच्छे समकालीन हिन्दी कवि की कविता को अनिवार्य रूप से एक राजनीतिक व्यक्ति की कविता मानने के पक्ष में है।३ राजनीति को लेकर युवा कवि गुमराह नहीं है। भारतीय संदर्भ में राजनैतिक स्थिति

---

(१) अवन्ती - --- पृष्ठ- ४६

(२) राष्ट्रवाणी विशेषांक- लेखक अपने परिप्रेक्ष्य में - पृष्ठ- ७१

(३) 'किसी अच्छे समकालीन हिन्दी कवि की कविता पर विचार करने से पूर्व इस बात को ध्यान में रखना होगा कि उसकी कविता अनिवार्य रूप से एक राजनीतिक व्यक्ति की कविता है।

-- आवेग-६ १६७२ 'राजनीतिक व गैर जिम्मेदारी के खिलाफ' पृ०२५

वाम और दक्षिण इन दो छोरों में विभाजित है और एक प्रबुद्ध बुद्धिजीवी को इन दोनों में से किसी एक का चुनाव कर लेना है।१ साठोत्तरी कविताओं को देखने से लगता है कि युवा कवि ने वामपन्थ की दिशा का चुनाव किया है। वह नेहरू युग की उदार आशावादी मध्यम मार्गीय राजनीति को त्यागकर वामपंथ की राजनीति को अपना समर्थन देता है। युवा कवि मलयज ने एक स्थान पर लिखा है कि नेहरू युग की राजनीति मुख्यत: राजनेताओं की राजनीति थी जब कि आज की राजनीति आम आदमी की राजनीति है। 'छात्र असंतोष, घिराव और दलबदल में आम आदमी की ही नस बजती है'।२

(।) युवा कवि की राजनीतिक प्रतिबद्धता :-

साहित्यकार की प्रतिबद्धता का प्रश्न बहुत पुराना है। कभी कहा गया कि कवि अपनी रचना के प्रति प्रतिश्रुत होता है और कभी उसकी प्रतिश्रुति जिन्दगी के प्रति बताई गई। युवा कवि प्रतिबद्धता के प्रश्न पर किसी संशय या भ्रम में नहीं है जिस प्रकार हाथी के पैर में सबके पैर आ जाते हैं उसी प्रकार राजनीतिक प्रतिबद्धता में आम आदमी की पूरी जिन्दगी आजाती है, ऐसी उसकी मान्यता है। 'जीवन कोई सिद्धान्त, कोई पार्टी नहीं है, जिसके प्रति प्रतिबद्ध हुआ जाए। इसी तरह अपने आप के प्रति प्रतिबद्धता भी थोथी है। क्योंकि 'मैं' और अपनाने का अस्तित्व सामाजिक राजनैतिक जीवन में ही है, उससे बाहर नहीं।'३

युवा कवि अपनी राजनीतिक जागरूकता का परिचय देने के लिए

- -

(१) विचार कविता की भूमिका - हरदयाल -- पृष्ठ- ३१

(२) पक्षधर ।५ पिछले दशक के युवा लेखन पर कुछ मूलभूत बातें- पृष्ठ- ६२

(३) राष्ट्रवाणी विशेषांक -- सातवें दशक की कविता के कुछ प्रश्न संदर्भ - मालती शर्मा -- --- पृष्ठ- ४०

कभी वयस्क प्रजातंत्र की उपलब्धियों और सीमाओं का मूल्यांकन करके उसकी सार्थकता पर प्रश्न चिन्ह लगाता है तो कभी चुनाव और कुर्सी-लिप्सा के तत्वावधान में होने वाले भ्रष्टाचार की चर्चा करता है। जनतंत्र में जनता की सहायता और मुट्ठी भर लोगों के अमन चैन पर युवा कवि की सीधी नजर है। राष्ट्रीय संदर्भों की समीक्षा के साथ-साथ युवा कवि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के मामलों पर भी अपनी बेलाग टिप्पणी देने में चूक नहीं करता है।

(ii) तद्युगीन जनतांत्रिक व्यवस्था की सार्थकता का सवाल :-

युवा कवि में जनतंत्र को लेकर अब कोई भ्रम शेष नहीं है। जनतंत्र में अच्छाइयां हो सकती हैं लेकिन भारतीय जनतांत्रिक व्यवस्था ने आम आदमी का जीवन मुश्किल ही किया है, ऐसा युवा कवि मानता है। दो दशकों से अधिक की अवधि सब्र या संतोष के लिए काफी होती है। युवा कवि ने बीस वर्षों की आजादी का मूल्यांकन करने के बाद यह पाया है कि या तो गत बीस वर्ष उपदेश सुनने में बीत गए या धोखा खाने में।१ स्वतंत्रता के बाद के दो दशकों में जनतंत्र का दुरुपयोग भी हुआ है। सत्ता गलत हाथों में जाकर गलत नतीजों तक पहुंच गई है। जनसाधारण के दुःख-दर्द से जनतंत्र के पहरुओं का कोई वास्ता नहीं है --

--- समूचा मौसम हो रहा है -

---

(१) क- बीस वर्ष
खो गये भरमे उपदेश में
एक पूरी पीढ़ी जन्मी पली पुसी क्लेश में
बेगानी हो गयी अपने ही देश में
-- आत्महत्या के विरुद्ध -- मेरा प्रतिनिधि- पृष्ठ- १८

ख- बीस साल
धोखा दिया गया
वही मुझे फिर कहा जायेगा विश्वास करने को
आत्म हत्या के विरुद्ध एक अधेड़ भारतीय आत्मा-रघुवीरसहाय-पृ०८६

आज का हाहाकार
और प्रजातंत्र
किसी कसाई हवलदार की तरह
सिर्फ चाय पर चुप है   १

कुछ युवा कवियों का विचार है कि प्रजातांत्रिक व्यवस्था अपने आप में इ उतनी बुरी नहीं है। प्रजातंत्र की विरोधी अवसरवादी सुविधाजीवी शक्तियां प्रजातंत्र को एक निरर्थक चीज बनाकर रख देती हैं। इसका परिणाम यह होता है कि प्रजातंत्र की अच्छाइयां आम आदमी की मुश्किलों में बदल जाती हैं।२ मौजूदा व्यवस्था में स्वतंत्रता संग्राम के नायकों को नगर से निकाल दिया गया है और षड्यंत्री खलनायकों का रथ जनतंत्र को रौंदकर शान के साथ चला जारहा है।३ ऐसी स्थिति में यदि प्रजातंत्र एक आतंक या 'टेरर' के रूप में उपस्थित होता है तो कोई आश्चर्य नहीं है। भारत भूषण अग्रवाल की 'अन्वेषण', मुद्राराक्षस की 'शिखण्डी', श्रीराम वर्मा की 'भेदते हुए', और रमेशगौड़ की 'अंधेरे से अंधेरे तक', हेतु भारद्वाज की 'संवाद: एक तरफा', धूमिल की 'पटकथा' आदि कविताओं में प्रजातंत्र को भयावह और सर्वग्रासी रूप में प्रस्तुत किया जाना इसी बोध का

- -

(१) कल्पना दिसम्बर १९७३- राजकुमार कुंभज -   --   पृष्ठ- ३४ ।
(२) सरकार आटा डालती है
प्रजातंत्र का
और चीटियां बढ़ रही हैं
कष्ट-विष धारण किए हुए
विजय - गंगा प्रसाद विमल -   --   पृष्ठ- ३५ ।
(३) कोड़ों की मार से जय-जयकार करता हुआ जनपद
जनतंत्र को रौंदकर निकलता हुआ विजयी षड्यंत्र का रक्त-रथ
-निषेध - 'नगर से निकाल दिये गए हैं नायक' -- परेश- पृष्ठ- १३४ ।

परिणाम है। कुछ कविताओं में आम आदमी की असहायता, असुरक्षा और निराशा बहुत साफ है। कुमार विकल ने प्रजातंत्र को 'जनतंत्र'१ की संज्ञा देते हुए संकेत किया है कि इसमें वही जीवित रह सकता है कि जो ताकतवर है। रमेशगौड़ की निम्नलिखित पंक्तियों में व्यक्त निराशा भी जनतंत्र की निरर्थकता का प्रतिपादन करती है--

मैं चाहे किसी भी पक्ष में रहूं
मुझे हारना है। क्यों कि मैं
एक ऐसी व्यवस्था में रहने को अभिशप्त हूं
जिसमें वादी या प्रतिवादी नहीं,
सिर्फ वकील जीतते हैं।२

(iii) चुनाव, कुर्सी और शोषण की राजनीति का विरोध :-

युवा कवि प्रजातंत्र के तत्वावधान में सम्पन्न होने वाले चुनावों को बहुत अधिक महत्व नहीं देता। उसका विचार है सही राजनीतिक बोध न होने से जनता हर पांचवे साल वोट की पर्ची देकर बहकाली जाती है।३ आश्वासनों और सब्जबागों में फंसकर वह अक्सर गलत आदमी को पांच वर्ष के लिए अपना भाग्य विधायक चुन लेती है। तथा-कथित जन-समर्थन से चुने गये ये तथा-कथित जनसेवक कुर्सी पाते ही अपना घर भरने में लग जाते हैं। जनता के सुख-दु:ख से उन्हें कुछ लेना-देना

- -

(१) राजपथ की जनतंत्री व्यवस्था में
मैं अकेला और अरक्षित हूं
-- निषेध-- वापसी -- -- पृष्ठ-१६८।
(२) वही - अंधेरे से अंधेरे तक -- -- पृष्ठ-१७६।
(३) मैं भी कितना भोला हूं कि हर पांचवे साल
एक परची देकर बहला लिया जाता हूं
निषेध-- जनतंत्र और मैं-- कुमार विकल -- पृष्ठ-१६४।

नहीं होता। कैसी भी विषम परिस्थिति हो ये जनसेवक लाभ उठाने में चूक नहीं करते --

बाढ़ आये
या सूखा पड़े
कुछ लोग हैं जो
दोनों ही स्थितियों में फायदा उठाते हैं,
बाकी लोग नुकसान
सरकार किसी पार्टी की बने
चमचे वही हैं १

कुछ जनसेवक केबिनेट में बन्द होकर संविधान विरोधी शक्तियों से जूझने का स्वांग करते हैं जबकि कुछ अधिक समझदार जनसेवकों ने पूंजीपतियों से हाथ मिला लिए हैं और देश हित तथा जन-हित के नाम पर चांदी काटने में लगे हुए हैं।२ स्वार्थ के आगे दल, सिद्धान्त या राष्ट्र ऐसे प्रजातंत्रीय लोगों के सामने कुछ भी मायने नहीं रखते। राजनेता जब कुछ राजनीति की कीचड़ में फंसकर केवल अपने कुर्सियाने की ही सोचता है तब उसकी बचकानी हरकतें कवि से छिपी नहीं रहतीं। देश की इस राजनीतिक विडम्बना को कवि ने बड़े पैने ढंग से उभारा है --

किसी के हाथों फटे हुए नक्शे के टुकड़े

- -

(१) जूझते हुए आत्मज्ञान- सुरेन्द्र तिवारी- --- पृष्ठ- ४६

(२) देश के हित में और
आम आदमी के हित में
गले मिल गए हैं समाजपाल- क्रान्तिलाल
और लम्बी और हिलती हुई दुमों को
और तेजी से हिलाकर वे
योजनायें (नौजवानों की मुनासिब कार्यवाही को रोकने और ध्वस्त करने वाली)
लागू करने में लगे हैं
-- विचार कविता की भूमिका- समारोह-नरेन्द्रमोहन- पृष्ठ- १०१

जमीन में बिखर गए - - - -

\+ + +

पर देखता हूं - एक नेता जी निश्चिन्त हैं
नक्शा फट गया तो क्या हुआ,
उनका चुनाव क्षेत्र तो सुरक्षित है।
बच्चों को पटाखे दे दिए गए हैं
और वे धड़ाधड़ छोड़ रहे हैं
अपनी-अपनी भाषा में गुर्राते हुए
और नेताजी तालियां पीट रहे हैं 1

देश के कर्णधारों की इन्हीं कारगुजारियों के कारण राजनीतिक पटल पर कोई बड़ा परिवर्तन नहीं हो पाता। बहुत होता है तो राजनीतिक दल-बदल का तमाशा देखने को मिल जाता है।2 ऐसी स्थिति में यदि प्रत्येक राजनीतिक दल और व्यवस्था के प्रति अनास्था[3] का भाव व्यक्त हो तो यह आश्चर्यजनक नहीं है। लेकिन यह अनास्था साठोत्तरी कविता का केन्द्रीय स्वर नहीं है। प्राय: कवियों ने साम्यवादी व्यवस्था के प्रति आशा भरी दृष्टि से देखा है। जब व्यवस्था की कारगुजारियां असह्य हो उठती हैं और जीना

- -

(1) प्रकर अप्रैल 1973- नक्शे के टुकड़े - प्रेमशंकर - पृष्ठ 27 से उद्धृत

(2) लाल टोपी पहनकर गया हुआ विधायक
सफेद टोपी पहनकर लौट आता है: और सफेद वाला काली।
इसके अतिरिक्त कुछ भी तो नहीं बदलता।
निषेध-- कहीं कुछ नहीं होता - रमेश गौड़- -- पृष्ठ- 185-86

(3) जो भी आयेगा
समाजवाद और समानता के नाम की
ईंटें पकायेगा
मन माने बेडौल सांचे में
गर्म हवाएँ - स्थिति यही है- सर्वेश्वर दयाल सक्सेना- पृष्ठ- 20।

आसान नहीं रह जाता तब व्यवस्था विरोध के स्वर भी सुनाई देते हैं। लेकिन ये स्वर अलग - अलग और अस्पष्ट होने के कारण व्यवस्था का कुछ बिगाड़ नहीं पाते। इसके अतिरिक्त विद्रोह के प्रति व्यवस्था की उपेक्षा[1] भी उसे कुंठित कर देती है लेकिन विद्रोह का बवंडर दबकर जाता है बिलकुल समाप्त नहीं होता। लीलाधर जगूड़ी ने सही संकेत किया है कि हर दरवाजे का बवंडर पर्दे की तरह पड़ा हुआ है। कवि को विश्वास है कि शीघ्र ही एक लावा कुर्सियों के आसपास फूटेगा और एक बड़ा परिवर्तन संभव हो सकेगा----

सिर्फ एक लावा जो कुर्सियों के आस-पास फूटेगा
नक्शा बदलने के लिए काफी है[2]

व्यवस्था की विसंगतियों, असमताओं और कारगुजारियों की पड़ताल के बाद अधिकतर युवा कवि इस नतीजे पर पहुंच गये हैं कि इसमें आमूलचूल परिवर्तन आवश्यक है।3 इस व्यवस्था में जीने से कहीं अच्छा आत्मघात करलेना है। प्रबुद्ध युवा कवि ने तमाम फजीहतों के बावजूद यदि आत्मघात नहीं किया है तो इसलिए कि उसे व्यवस्था परिवर्तन के अनुकूल मौसम का इन्तजार था।४

- -

(१) कोई बवंडर उठता है व्यवस्था के खिलाफ। तब
हर बार। रेशमी मसहरी लगाकर
सो जाते हैं व्यवस्था के तन्तु
विचार- कविता की भूमिका - कविता में कविता के लिए
-- राजकुमार कुंभज - -- पृष्ठ-१३४।

(२) नाटक जारी है - इस व्यवस्था में -- -- पृष्ठ- ४४।

(३) अब इसमें कोई दो राय नहीं हो सकतीं कि यह व्यवस्था
गर्भपात का विषय बन गयी है
और इसका स्थिर रूप नहीं दिया जा सकता
तलघर - प्रमोद सिन्हा - --- पृष्ठ- ३

(४) निबंध-- मेरी पीढ़ी: एक आत्मस्वीकृति- रमेशगौड़- पृष्ठ- १७६।

एक ओर जहां अनेक युवा कवि प्रजातंत्र से सदैव के लिए छुट्टी पालेना चाहते हैं वहीं धूमिल जैसा युवा कवि कहता है कि 'मुझे अपनी कविताओं के लिए । दूसरे प्रजातंत्र की तलाश है '। पता नहीं दूसरे प्रजातंत्र से धूमिल का आशय किस प्रकार की व्यवस्था से है । इतना अवश्य है कि इस प्रकार की विचारधारा उनके अकेले के राजनीतिक आग्रह या काव्यगत आग्रह का दृढ़ कथन मात्र नहीं है, जैसा कि अशोक वाजपेयी ने लिखा है, इनमें भारतीय मनुष्य की समकालीन तलाश का, उसकी नई आक्रामकता का, सीधा पर नाटकीय वक्तव्य ही है।१ राजनैतिक अर्थ में एक जागरूक और क्षुब्ध कवि की यह तलाश कुछ अनुचित नहीं कही जा सकती ।

विरोध, विद्रोह और क्रान्ति के स्वर::-

साठोत्तरी कवि व्यवस्था के प्रति अपने तेज गुस्से का प्रदर्शन 'अलियावैताल' शब्दावली में करता है । उसे एक चिनगारी की प्रतीक्षा है जो ढोंगी व्यवस्था को जलाकर खाक करदे२ ताकि तमाम दु:ख-दैन्य और शोक समाप्त हो जाय । वह अपने निजी प्रयासों से एक बहुत बड़ा परिवर्तन लाने को इच्छुक है३ लेकिन उसे मालूम है कि उसकी कलम बसूला नहीं हो

---

(१) फिलहाल - --- पृष्ठ- ३४ ।

(२) एक चिनगारी और --
जो खाक करदे
दुर्नीति को, ढोंगी व्यवस्था को
कायर गति को
मूढ़ मति को
जो मिटादे दैन्य, शोक व्याधि
-- गर्म हवाएँ-- लोहिया के न रहने पर - सर्वेश्वर दयाल सक्सेना-पृ० २६

(३) जी चाहता है एक ठोकर से उड़ादूं यह पत्थर
थूक दूं: उफन जायें बंधे सिन्धु सारे
मुट्ठी में पीसकर ब्रह्माण्ड, गढ़ दूं एक घर ------ एक घर
-- आत्म निर्वासित तथा अन्य कविताएँ-- रात पहले पहर में-
--- राजीव सक्सेना-- पृष्ठ- ४३ ।

सकती अर्थात कविता क्रान्ति के लिये माहौल तो बना सकती है लेकिन खुद क्रान्ति नहीं कर सकती । फिर भी वह कविता रूपी सब्जी काटने का थोथा चाकू लेकर खाली टिनों की लम्बी कतार से जूझता है ।१ सुविधाजीवी होने की आकांक्षा उसमें बिल्कुल नहीं है- अन्यथा वह नारे की भाषा पढ़ने से इन्कार न करता ।२ व्यवस्था अपनी ओर से यह दिखाने का प्रयास करती है कि विरोध या विद्रोह कहीं नहीं है लेकिन इस तथा-कथित अमनचैन के नेपथ्य में विद्रोही सक्रिय हैं । उनके हाथों में अपने खून से भरी हुई बाल्टियां हैं और संगीनधारी पहरेदारों की आंखें बचाकर वे विद्रोह का एक नया अध्याय लिख रहे हैं ।३ युवा कवि शोषितों और मेहनतकशों से गुलामी को काट देने और शोषण से मुक्त होने का खुला आह्वान करता है ।४ कुछ कवियों की धारणा यह भी है कि देश में क्रान्ति की शुरूआत हो चुकी है । क्रान्ति की आग सारे मुल्क में फैल गई है ---

- - - - - - - इस आग से
घर दफ्तर और

- -

(१) आंख हाथ बनते हुए -- भी -- ज्ञानेन्द्रपति -- पृष्ठ- ७

(२) नारे यानी कि सुविधा
उसने गोल मुस्कान के साथ कहा
और टोपी माथे पर झुका ली ।
मैंने नारे की भाषा
पढ़ने से इंकार कर दिया ।
-- विचार कविता की भूमिका-- प्रत्यावर्तन- सुरेश क्षतुपर्ण-पृ०२००-२०१

(३) विचार कविता की भूमिका- भारत १९७२- वेणुगोपाल- पृष्ठ- १३१

(४) काट दो ।
आंखों और पांवों के दरम्यान पल रही गुलामी को
और खोल दो । उन जंजीरों को
जो बेवजह बांधती हैं
तुम्हारे साहस को ।
--- विचारकविता की भूमिका- कविता में कविता के लिए-राजकुमार कुंभज-
-- पृष्ठ- १३८

कनाट प्लेस की सिम्फनी में रंगीन झंकार
सब कुछ जलकर राख हो जायेंगे। इसे
तुम प्रलाप कह सकते हो
लेकिन यह सचाई है।१

यहां यह प्रश्न उठना वाजिब है कि युवा कवियों का आक्रोश और विद्रोह किस हद तक सार्थक और सच है कहीं ऐसा तो नहीं है कि विद्रोह कविताओं की सतह पर ही तैर कर रह जाता है। यह भी देखने में आता है कि विद्रोही कवितायें एक जैसी शब्दावली में लिखी गई है। कहीं ऐसा तो नहीं है कि विद्रोह युवा कविता का एक फैशन या रूढ़ि बनकर रह गया है। डॉ० गोविन्द रजनीश ने विद्रोह और राजनीतिपरक कविताओं को एक दूसरे की नकल लगने के मूल में अभिव्यंजना रूढ़ि को मान्यता दी है। उनके इस कथन से सहमत हुआ जा सकता है कि इस रूढ़ि का प्रमुख कारण कवि के आक्रोश का वैयक्तिक से सामूहिक हो जाना है२ लेकिन यह निश्चित है कि युवा कविता में छद्म विद्रोह को लेकर लिखी गई कविताओं की संख्या अच्छी खासी है। बगैर सही राजनीतिक - सामाजिक समझ के सब कुछ तोड़ने - फोड़ने का उग्र वामपंथी दुस्साहस छद्म और अव्यावहारिकविद्रोह की ही सृष्टि कर सकता है। 'जो विद्रोह किसी भौतिक शक्ति की नाराजगी का खतरा न उठाये और केवल सांस्कृतिक मर्यादाओं के तोड़ने का नाटक करे, वह विद्रोह हर विडम्बना से अपनी रक्षा करता हुआ अपने नाम की कूटनीति चलाता है और 'समझौतावादी' शैली को 'विद्रोही प्रवृत्ति' की संज्ञा दिलाने का छद्म रखता है।'३ उत्तेजक भाषा में गर्म बातें कह देना

- -

(१) मृतशिशुओं के लिए प्रार्थना- अरुंधति और गिरीश प्रणव रफीक- -- प्रणवकुमार वन्ध्योपाध्याय- पृष्ठ- ५२।

(२) अभिव्यक्ति - सं० बालकृष्णराव, गोविन्द रजनीश- पृष्ठ- ६६।

(३) मधुमती अंक - अधुनातन कविता आज का रचनाकार- रामदेव आचार्य- ----पृष्ठ- ६३।

सही विद्रोह नहीं है। कुछ कवितायें इसी प्रकार के विद्रोह का प्रदर्शन करती हैं और इसीलिए कमजोर भी हैं।१ कवि क्रान्ति और विद्रोह की बातें करते-करते काफी हाउस और रेस्तरां में घुसने की हास्यास्पद स्थिति से भी अवगत है। यह अच्छा है कि अधिकतर युवा कवियों को सही और रचनात्मक विद्रोह की पहिचान है और क्रान्ति की दुहाई देने वाले समझौता परस्तों और घुसपैठियों को उन्होंने स्वीकार नहीं किया है--

देखो दोस्त
न तो मुझे छद्म क्रान्ति भाती है
और न विवशता की शान्ति
मैं इन्द्रधनुष के भुलावे में
बाढ़ लाने वाली बरसात की बात पहचानता हूं
मैं जानता हूं तुम्हारे कीर्तन का रहस्य
कि गुलाब की माला तुम्हारे गले में हो ?

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक संदर्भ ::-

युवा कवि में राष्ट्रीय राजनीति के प्रति सजगता के साथ-साथ विश्व राजनीति के मंच पर घटित होने वाली घटनाओं के प्रति अच्छी खासी दिलचस्पी भी है। उसने विश्व स्तर पर घटित होने वाले रंग-भेद, साम्राज्यवादी षड्यंत्रों और राजनीतिक स्वार्थों का खुला विरोध किया है। 'सव्यसाची' की कविता 'राबर्ट कनेडी के वध पर' में अनेक अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भों की चर्चा है ---

- -

(१) इस सारे क्रम का। मैं क्या करूं ? क्या उल्लुओं की जगह
इस रथ में जोत दूं। दो कुत्ते ?
क्या बागडोर देदूं। वेश्याओं के। हाथ में ?

(२) विचार कविता की भूमिका -- हर आदमी का आकाश-विमय-पृ०१६७-६८

हिरोशिमा और नागासाकी का ध्वंस होता है
मैनिको जलता है, स्वेज पर हवाई हमला, लेनिन ग्राड का घेरा
सालाबार की तानाशाही, इयानस्मिथ का पैशाचिक अट्टहास
दक्षिणी अफ्रीका का रंग-भेद, उत्तरी वियतनाम पर बमवर्षा

+ + +

और स्पेन के जनयुद्ध में जनतंत्र के जख्मी शरीर को
फौजी बूटों से रौंदता हुआ तानाशाह फ्रैंको जीत जाता है।१

रघुवीर सहाय, मणिमधुकर, ऋतुराज, और राजकुमार कुंभज, राजकमल चौधरी, धूमिल आदि कवियों की अनेक कविताएँ विश्व राजनीति से जुड़ी हुई हैं। आम तौर पर इन कविताओं में विश्व पर मंडराते युद्ध की विभीषिका और उसे समाप्त करने में संयुक्त राष्ट्र संघ की असफलता को रेखांकित किया गया है। यदि राजकुमार कुंभज और ऋतुराज की कविताएँ संयुक्त राष्ट्र संघ पर व्यंग्य करती हैं[2] तो मणिमधुकर संयुक्त राष्ट्र संघ पर निर्भर होने की निरर्थकता का बोध कराते हैं ---

- -

(१) सुबह होने से पहले - -- पृष्ठ- ७५

(२) क- यूं तो
आग बुझाने के लिए फायर ब्रिगेड
और समस्याओं के सुलझाने के लिए
पैदा हुआ है । दुनिया में । संयुक्त राष्ट्रसंघ
फिर भी - - - - -
--- विचार कविता की भूमिका- कविता में कविता के लिए- पृष्ठ-१३६ ।

ख- ऊ थांट ने अपनी कार को
ब्रेक लगाया है
सारे कमरों से सड़ांध उठ रही है
सारे अमरीका को मितली आ रही है
और महासचिव
अपने कपड़ों पर इत्र छिड़क कर
कागजों पर जरूरी दस्तखत करने में
व्यस्त हो गये हैं
--- आवेग-६ १९७२- दिनचर्या -- --- पृष्ठ- १२ ।

संयुक्त राष्ट्र संघ के पास कोई योजना
कोई राह नहीं है १

युद्ध के प्रति घृणा उभारते हुए युवा कवियों ने उन मुक्ति संग्रामों का समर्थन किया है जो चिली, वियतनाम, क्यूबा, कोरिया, बंगलादेश आदि में जनसाधारण द्वारा लड़े जा रहे हैं। इस प्रकार के युद्धों के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार का रक्तपात या युद्ध युद्ध युवा कवि की दृष्टि में घृणित है। युवा कवि युद्ध को एक ऐसा जादू मानता है जो व्यक्ति को मन और कर्म दोनों से निष्क्रिय बना देता है।२ युद्ध के आतंक को 'बलदेव वंशी' की कविता 'युद्ध-प्रेत' बहुत सहज ढंग से उभारती है। आकाश में एक जहाज के गुजरजाने से बच्चों की हंसी और किलकारी बन्द हो जाने[3] के संकेत से विश्व के हर्ष और उल्लास के युद्ध के मौसम में रीत जाने का उल्लेख इसमें है।

- -

(१) खण्ड-खण्ड पाखण्ड पर्व-- --- पृष्ठ- ४०

(२) और युद्ध - - - ऐसा जादू है
जो तुम्हारे दिमाग में
अंधकूप सा खो जायेगा
जब तुम होश में लौटोगे
तुम्हारा हाथ
काठ का हो जायेगा

--- विचार कविता की भूमिका-- युद्धस्तर पर लेत- गोविन्द उपाध्याय-पृ०११६

(३) अभी थोड़ी देर पहले
यहां बच्चे थे
बच्चे
हंसते
किलकते
खुशी में चीखते
आकाश में एक जहाज गुजर गया है
इधर से
उधर से
अब। बच्चे कहीं नहीं दीखते

- -- उपनगर में वापिसी- --- --- पृष्ठ- ६६।

Smt. HANSA MEHTA LIBRARY
THE M. S. UNIVERSITY OF BARODA

ग- युगबोध और यथार्थबोध :-

किसी भी प्रकार के सर्जन के लिए युगीन चेतना का अस्तित्व आवश्यक है `युग चेतना को छोड़कर समाज को प्रस्तुत करने से दो खतरे सामने आते हैं --- एक तो यह कि वह समाज अपने यथार्थ रूप में प्रस्तुत नहीं हो पाता, दूसरे यह कि सर्जक का यह कार्य निर्माण कार्य न होकर सीधे समाज का स्थूल प्रस्तुतीकरण हो जाता है।`१ साठोत्तरी कवि में युगीन चेतना की समझ भरपूर है। उसने अपने परिवेश और युग को जिया है और उन्हीं से सम्बद्ध अपने अनुभवों को कविता में ढाला है। वह ऐतिहासिक और राजनीतिक संदर्भ में पूरे समाज के दुख-सुख हर्ष-विषाद को काव्यात्मक रचाव देने में सफल रहा है। साठोत्तरी कविताओं को देखने से एक बात बड़ी आश्चर्यजनक लगती है कि इनमें जनसाधारण के सुखी क्षणों का उल्लेख न के बराबर है जब कि उसकी तकलीफ के ब्यौरे अनगिनत हैं। ऐसा लगता है जैसे चतुर प्रूफरीडर की तरह साठोत्तरी कवि की दृष्टि गलत चीजों पर ही पड़ती रही है। उसे सामाजिक कुरूपताओं, राजनीतिक विसंगतियों और व्यक्तिगत मुश्किलों को उधेड़ना अधिक अच्छा लगता है। जगदीश चतुर्वेदी का यह कथन काफी हद तक सच है कि कविता आज भावुकता की सीमा से हट कर यथार्थ की, बौद्धिकता की, सहज अभिव्यक्ति बन गई है।२ यह यथार्थ एकांगी न होकर बहुमुखी है इसमें यदि समाज की धड़कन है तो व्यक्ति का दुःख-दर्द भी, इसमें यदि राजनीतिक हलचल है तो सामाजिक उथल-पुथल भी। शिक्षा, न्याय, अर्थ आदि जीवन के अनेक क्षेत्रों के यथार्थ चित्र साठोत्तरी कविता में सहज उपलब्ध हैं।

- -

(१) आज का हिन्दी साहित्य : संवेदना और दृष्टि- डॉ॰ रामदरश मिश्र --- पृष्ठ- ११।

(२) प्रारम्भ -- नये काव्य की भूमिका ---

(j) <u>जीवन का बहुमुखी यथार्थ</u> ::- <u>सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक परिप्रेक्ष्य</u>

पिछले सालों में देश को अनेक आन्दोलनों, बन्दों, दल-बदल सरकारों के उत्थान- पतन आदि से गुजरना पड़ा था। युवा कवि ने इस अराजकता को चिन्ता की दृष्टि से देखा है। हड़ताल, जुलूस, अनशन, धरना, घिराव आदि शोषण के विरुद्ध जनता के हथियार हैं लेकिन आज की बदली हुई हवा में इनका उपयोग कुछ निहित स्वार्थों की इच्छानुसार होता है। युवा कवि इस प्रकार के भीड़-भाड़ और हुड़दंग का कटु आलोचक है। उसे लगता है कि इतिहास बन्द कमरे में कैद हो गया है और शेष, और एक जुलूस शेष रह गया है ---

जो
सड़क पर बिस्तर बिछाकर
हवा पर थूकता है
धूप को गालियां देता है
धरती और धरती के बीच
पनपते हुए वर्तमान को
बेचता है १

दो दशक से भी लम्बी स्वाधीनता के बाद भी राजतंत्र और अमला तंत्र की मिलीजुली कारगुजारी का दुष्परिणाम यह है कि देश किसी भी क्षेत्र में आत्म निर्भर नहीं हो सका है। डॉ० शिवप्रसाद सिंह ने स्वतंत्रता के बाद के वर्षों को अगर 'शर्मनाक भिक्षाकाल' कहकर संबोधित किया है तो यह अनुचित नहीं है। इस देश में सबकुछ आयात ही होता है और हम सिवाय गाल बजाने के कुछ भी कार्य नहीं करते।२ अनेक

---

(१) उत्कर्ष सितम्बर १९६७- विजयबहादुर सिंह --
(२) मेरे देश में सब कुछ आता है। बाढ़, भूकम्प, महामारी और शरणार्थी, बाहर से अनाज भी। फिर भी हरबार कोई चीज हमारे हाथ से निकल जाती है। और हम तारीख बढ़ाते हुए। अपने हौसलों की बड़ाई करते हैं।
--- निषेध- निर्माण --- विनय -- पृष्ठ- ९९।

योजनायें बनी हैं, हरित-श्वेत आदि क्रांतियों के दावे किए गए हैं, लेकिन साठोत्तरी कवि को यह सब सच नहीं लगता। उसे लगता है कि देश का वास्तविक नक्शा आयोजनों की फूलमालाओं से बुरी तरह लद गया है।[१] न्याय, शिक्षा आदि किसी भी क्षेत्र में न तो किसी भी प्रकार का नियम है और न किसी प्रकार की आशा। श्रीकान्त वर्मा ने न्याय के क्षेत्र में औसत आदमी की असहायता[२] और शैक्षिक क्षेत्र में अनुसंधान की निरर्थकता को बखूबी रेखांकित किया है ---

- - - - - अनुसंधान करो जाकर किसी
विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में,
सागमें नमक, राजनीति में ईमान,
जीने में मजा
नहीं रहा।[३]

ईमानदारी, नैतिकता, सत्य, प्रेम, परोपकार आदि सद्गुण आज केवल शब्द हैं। हर एक आदमी स्वार्थ में गहरे डूबा हुआ है। यदि किसी के पास पवित्र भावनायें और आदर्श हैं भी तो वे येनकेन प्रकारेण 'रोटी' का प्रबन्ध करने में रीत गये हैं। लगता है दोनों वक्त की रोटी का प्रबन्ध करना ही आज मानव का ध्येय रह गया है। धूमिल ने इस प्रकार

- -

(१) - - - - - और हरी
क्रान्ति के लिये हर खेत में ट्रैक्टर और
हर मुहल्ले में रसोई गैस प्लाण्ट बैठा दिये गये
हैं
- -- एक उठा हुआ हाथ - हर बार नहीं होता है - भारतभूषण अग्रवाल - पृष्ठ

(२) न्यायालय बन्द हो चुके हैं - अर्जियां हवा में
उड़ रही हैं,
कोई अपील नहीं,
कोई कानून नहीं,
कूड़े में डूब गई हैं प्रत्याशाएँ,
जलसाघर - प्रजापति - पृष्ठ- ७८

(३) वही - आग बटे की तरह - पृष्ठ- १०

की विसंगतियों को संक्षेप में बड़ी कुशलता से कह दिया है।१ बलदेव वंशी की 'बीघी का वैसा ही' कविता में भी स्पष्ट किया गया है कि स्वार्थ की धारा में वक्ष तक डूबे हुए व्यक्ति की ईमानदारी उचक्कों के साथ तट पर खड़ी है।२ साठोत्तरी कवियों के युगबोध से लगता है कि सारा परिदृश्य गड़बड़ा गया है। चारों ओर अच्छा खासा अन्धेर है। सौमित्र मोहन की 'महिमा' कविता व्यापक स्तर पर फैले हुए सामाजिक नैतिक भ्रष्टाचार को एक खास ढंग से उभारती है---

कालाधन कालाधन कालाधन कालाधन कालाधन कालाधन
सफेदमूंठ सफेदमूंठ सफेदमूंठ सफेदमूंठ सफेदमूंठ सफेदमूंठ
लाल लाल लाल लाल लाल लाल
फीताशाही फीताशाही फीताशाही फीताशाही फीताशाही फीताशा
कागज कागज कागज कागज कागज कागज
का शेर का शेर का शेर का शेर का शेर का शेर
अंधेर
अंधेर
अंधेर
अंधेर
अंधेर
अंधेर ३

१- मैंने अहिंसा को
एक सुवास्थ्य शब्द का गला काटते हुए देखा
मैंने ईमानदारी को अपनी चोर जेब में
मरते हुए देखा
मैंने विवेक को
चापलूसों के तलवे चाटते हुए देखा ------।
--- संसद से सड़क तक -- पटकथा -- पृष्ठ- १३१

२- पानी की धार तेज है।तुम वक्ष तक डूबे हो। और तुम्हारी ईमानदारी। अभी काफी दूर तट पर खड़ी है। किन्हीं उचक्कों के साथ।
--- विचार कविता की भूमिका -- --- पृष्ठ- १०७।

३- निषेध - --- पृष्ठ- ८५।

युवा कवि का युगबोध अनास्था पर आधारित है। यह ठीक है कि देश में सामाजिक- राजनीतिक स्तरों पर अनेक विरूपताएँ हैं। जन-साधारण का जीवन सरल नहीं रह गया है फिर भी उसे कुंभीपाक नरक की संज्ञा देना [१] या राजा दुबे के अनुसार 'होगया है सारा का सारा राष्ट्र। किसी तवायफ के घर उतरी कुर्ती' कहना घोर अनास्थावादी दृष्टि है और इसकी प्रशंसा नहीं की जा सकती। इस प्रकार के कुछ अतिरंजित स्वरों को छोड़ दिया जाय तो युवा कवि की अनास्था अकारण नहीं है। उसने व्यक्ति के स्तर पर जो भोगा है और समाज के स्तर पर जो देखा है वह उसे क्रुद्ध और शंकालु बनाने के लिए पर्याप्त है। निजी स्तर पर उसकी विवशता का आलम यह है कि उसे एक ही वक्त में प्रेमिका को पत्र, साहब को अर्जी, शोक संदेश और बधाई के तार लिखने पड़ते हैं।२ जहां वह नहीं चाहता वहीं वह रहने के लिए अभिशप्त है।३ परिस्थितियों की मार ने उसका अमानवीयकरण कर दिया है। पड़ोसी की मौत पर आंसू बहाने की बजाय वह इस बात में ज्यादा इन्ट्रेस्टेड है कि मरे पड़ोसी की जगह पर नयी नियुक्ति कब होगी।४ इस तमाम विभीषिका और विवशता के पीछे

- -

(१) कहने के लिये, मजा करने के लिये या अपने को
धोखे में रखने के लिये हम भले ही कह लें
इस देश को ---- आर्यावर्त, जम्बूद्वीप रेवाखण्ड,
या ---- या हिन्दुस्तान, गांधी का भारत,---- लेकिन
कुम्भीपाक से भी भयावना है यह
वह मेरा देश।

--- साठोत्तरी कविता-- पिता स्थिति : एक वक्तव्य-सुरेश सलिल-पृष्ठ- १९

(२) निषेध- आत्मस्वीकृति- रमेशगौड़ --- पृष्ठ-१०४

(३) हम जहां नहीं चाहते। पैराशूट से उतार दिये जाते हैं
--- कैफियत -- पैराशूट - देवेन्द्रकुमार -- पृष्ठ- २८

(४) पर मैं हूं। कि दौड़कर लिफ्ट में चढ़। दफ्तर तक जाता हूं। पता
लगाने। कि नयी जगह पर नियुक्ति कब होगी
--- शहर अब भी संभावना है -- निश्शब्द - अशोकवाजपेयी- पृष्ठ- ८४

कोई षड्‌यंत्र है, युवा कवि का यह सोचना स्वाभाविक है--

प्रजातंत्र और प्रेम
किसी षड्‌यंत्र के
शिकार बन रहे हैं। यहां
और वहां लोहे के जूतों से
दबकर मर रही हैं
संवेदनाएँ १

अकविता सम्प्रदाय के कवियों की तुलना में प्रतिबद्ध और प्रगतिशील कहे जाने वाले कवियों का यथार्थबोध बहुत विस्तृत है। मुक्तिबोध, धूमिल, लीलाधर जगूड़ी, राजीव सक्सेना, रमेशगौड़, श्रीकान्त वर्मा, रघुवीर सहाय, चन्द्रकान्त देवताले, मुद्राराक्षस, बलदेववंशी, परेश, मलयज आदि कवियों ने जीवन - समुद्र की सारी लहरों, खाली सीपियों और मंहगे मोतियों को एकसा देखा है और उन्हें कविता की वस्तु बना दिया है। एक ओर मुक्तिबोध वर्तमान समाज के अप्रासंगिक होने और इसकी अवश्यम्भावी मुक्ति की बात करते हैं [2] तो दूसरी ओर धूमिल आज के आदमी की नियति को व्यंग्य के सहारे उभारते हैं --

कि वह चाहे जो है
जैसा है, वहां कहीं है
आज कल

(१) विचार कविता की भूमिका: कविता में कविता के लिए- राजकुमार कुम्भज-
--- पृष्ठ- १३४ +

(२) वर्तमान समाज में चल नहीं सकता
पूंजी से जुड़ा हुआ हृदय बदल नहीं सकता
स्वातंत्र्य व्यक्ति का वादी
छल नहीं सकता मुक्ति के मन को
जन को।
-- चांद का मुंह टेढ़ा है : 'अंधेरे में' -- -- पृष्ठ- २८३-८४

कोई आदमी कूते की नाप से
बाहर नहीं है १

इसी प्रकार युवा कवियों ने युद्ध की हिंसा २, नारियों के साथ अमानवीय व्यवहार ३ आदि समस्याओं को भी उठाया है। इस वृहत्तर यथार्थ के चित्रण के मध्य देश की राजनीतिक सामाजिक विसंगतियां तो प्राय: उभरती हैं ४ ये ठीक है कि कुछ अवास्तविक और अतिरंजित यथार्थ चित्र भी उभरते हैं लेकिन वे युवा कविता की यथार्थ चित्रण की मुख्य धारा में नहीं आते। बूं को मनुष्य से ज्यादा कहना इसी प्रकार की अतिरंजना पूर्ण उक्ति है--

- -

(१) संसद से सड़क तक -- मोचीराम -- -- पृष्ठ- ४१

(२) सड़क पर चलता हुआ
सहस्त्रों सूर्यों के प्रकाश की तरह
एक बम के फटने से
--- मारा गया मैं
--- जलसाघर: युद्ध नायक - श्रीकान्त वर्मा --- पृष्ठ- ६८

(३) गरीबी, मूर्खता और नपुंसकता की कीमत
पुरुषों से नहीं औरतों से वसूली जायेगी
विपत्ति जब भी आएगी
केवल लड़कियां रौंदी जायेंगी
--- निषेध : कविता इसी रास्ते आएगी-- परेश - पृष्ठ- १२८-२९

(४) ऐश करते हैं वे लोग
- - - - - - - - -
जिन्हें जेलों में बन्द होना चाहिये
बाकी लोग कैदी हैं
एक बहुत बड़ी जेल में
--- बूझते हुए : आहान - सुरेन्द्र तिवारी -- पृष्ठ- ४८ ।

क्या तुम्हें नहीं लगता कि वे तक हमसे ज्यादा आबाद हैं
सुखी हैं। और दरअसल क्या यह सभ्यता उन्हीं की नहीं है ?१

घ- आम आदमी के दु:ख-दर्द की अभिव्यक्ति

आम आदमी को लेकर इधर साहित्य में काफी शोर-शराबा रहा। समान्तर कहानी आन्दोलन में 'आम आदमी' की बात बार-बार उठाई गई है। प्रश्न यह उठता है कि यह आम आदमी कौन है ? श्रीकान्त जोशी ने 'आम आदमी' की परिधि में 'मजदूर, छोटा किसान, आफिस का कलम घसीट, कुली, तांगा चालक, अध्यापक से लेकर सिनेमा के एक्स्ट्रा, वेश्या, कम्पोजीटर तथा फुटपाथ और झुग्गी झोंपड़ी में रहने वाले लोगों को समेट लिया है।२ डॉ० विजयशुक्ल का विचार है कि शहरीकरण व शरणार्थी संस्कारों की उपज से ही 'आम आदमी' की उपज होती है।३ यानी कि वे ग्रामीण सर्वहारा को 'आम आदमी' मानने के पक्ष में नहीं हैं। मार्क्सीय शब्दावली में उसे 'सर्वहारा' कहा गया, जब कि डॉ० धीरेन्द्र सिंह का मत है कि आम आदमी के अन्तर्गत वे सभी व्यक्ति आजाते हैं जो जीवन और परिस्थितियों की विषमता से जूझ रहे हैं। उनके अनुसार 'आम आदमी' में 'केवल मजदूर और श्रमिक ही नहीं, पर किसान, क्लर्क, शिक्षक, मध्यवर्गीय नारी तथा वे सभी व्यक्ति आते हैं, जो शोषण की प्रक्रिया में पिस रहे हैं।३ वास्तव में जिस किसी आदमी की आर्थिक स्थिति बहुत कमजोर है तथा रहन-सहन का स्तर अत्यन्त साधारण है ऐसा निम्नवर्गीय तथा निम्न मध्यमवर्गीय व्यक्ति ही आम आदमी है। इसका अर्थ यह हुआ कि समाज का बहुसंख्यक वर्ग जिसमें कुल जनसंख्या का ६०, ७० प्रतिशत आता है आम आदमी ही है। इसी आम आदमी के दु:ख-दर्द को उभारने के

---

(१)
(१) धर्मयुग २१ दिसम्बर, १९७५ -- -- पृष्ठ- १८
(२) धर्मयुग ११ जौलाई, १९७६-'रचना धर्मिता का आधार आम आदमी या खास पार्टी' - -- -- पृष्ठ- २७
(३) धर्मयुग ६ जनवरी, १९७७- समकालीन कविता और आम आदमी पृ० १८

लिये सक्रिय होकर साठोत्तरी कवि ने कविता को जनसाधारण के निकट की चीज बना दिया है। धूमिल, लीलाधर जगूड़ी, रामदेव आचार्य, सतीश वर्मा, बल्देववंशी, रणजीत, श्याम विमल, रघुवीर सहाय, कमलेश, राजीव सक्सेना, प्रणवकुमार बन्द्योपाध्याय आदि कवियों ने 'आम आदमी' को अपनी कविताओं में रूपायित किया है।

आज यह स्वीकार किया गया है कि "रचना का आधार 'आम आदमी' की जिन्दगी की समझ में होता है।"१ अत: यह आकस्मिक नहीं है कि युवा कवि अपने निजी दु:ख-सुख के घेरे से बाहर निकल कर आम आदमी के जीवन को कविता में उतारने लगा। डॉ० विनय के शब्दों में "समाकालीन कविता ने सूरज को सामने से हटाकर दिये की तरफ नजर की, इस तरह जिन्दगी का उपेक्षित सामान्य मानव साधारण भाषा में अपनी अभिव्यक्ति पा सका।"२ 'आम आदमी' कभी भी इससे पहले इतने व्यापक रूप में कविता के क्षेत्र में कभी स्थान नहीं पासका। युवा कवि के इस कथन में नवोक्ति नहीं है कि वह अपनी कविता की शुरुआत आग से खेलते हुए और पसीने में डूबे हुए काले इंसान की जिन्दगी से करता है।३ उसने शब्द या शिल्प के बजाय आदमी को केन्द्र में रखकर कविता लिखना शुरू कर दिया है। एक आदमी

- -

(१) धर्मयुग ११ जुलाई १९७६- डा० विजय शुक्ल- पृष्ठ- २७

(२) आवेश-१, १९७२- घेरे से मुक्त एक तीसरी भाषा की तलाश- पृष्ठ- ५०

(३) कोई भी बिम्ब छुपाकर नहीं
रखा था अपने पास
यह वह भी जानते हैं
मेरा एक मात्र शब्द
धुएँ, आग, मेहनत, पसीने से
काले पड़े इंसान से
शुरू होता है

--- विचार कविता की भूमिका- स्वतंत्रता(१) हरिप्रसाद त्यागी- पृ० १८० ।

से दूसरे आदमी में फर्क पैदा करने वाली तमाम चीजों को वह हटा देना चाहता है ---

मैं अपनी कविता में शब्द या शिल्प
नहीं --- आदमी रखकर सोचता हूं
आदमी से आदमी तक के बीच
कुर्सियां, मेजें-- कागज - मशीनें- भाषा
पोस्टर राजनीति और क्रीज वाले कपड़े
हटाना चाहता हूं [१]

समकालीन कविता का केन्द्रीय चरित्र आम आदमी है इस बात का सबूत अनेक कविताओं में चित्रित पात्रों से मिल जाता है। निराला के 'महगू' की परम्परा में 'मंजू हालदार' (राजकमल चौधरी) 'बैजू', 'पांचू', 'रामगुलाम', 'रामधुन', 'रामलाल', 'रामसरन', 'गिरीश' (रघुवीर सहाय) 'मोचीराम', (धूमिल) 'तरक्कीराम' (कुमार विकल) 'लुकमान अली' (सौमित्रमोहन) 'रमुआ' (श्रीराम तिवारी) 'रामेसर' (ज्ञानेन्द्रपति) आदि काव्य नायक धीरोदात्त या उच्चवर्गीय न होकर सामान्य लोग ही हैं। इनकी तकलीफ इनके संघर्ष और इनकी महत्वाकांक्षाएँ युवा कवि को कहीं गहरे छू गई हैं और वह उनकी काव्यात्मक अभिव्यक्ति के लिए बाध्य हो गया है।

निराला की 'भिक्षुक' और 'वह तोड़ती पत्थर' जैसी कविताओं से आम आदमी के चित्रण की जो परम्परा विकसित हुई वह

---

(१) पुनश्च : कविता का आदमी - श्यामविमल- पृष्ठ- २८० से उद्धृत।

साठोत्तरी कविता में पर्याप्त विस्तार ले लेती है। भुट्टा सेंकने वाली लौंडी[1] शरीर बेचने वाली युवती[2] फीस न देने पर स्कूल से निकाला गया गरीब का बेटा[3] और अभाव की स्थिति में निर्वासित लोग[4] साठोत्तरी कविता में जगह - जगह मिलते हैं। अवसरवादी तत्त्व केवल चुनाव आदि के मौके पर आम आदमी की खोज खबर लेते हैं लेकिन प्रगतिशील युवा कवि के

- -

(१) करौल बाग के फुटपाथ पर
तारकोल की आग में
भुट्टा सेंकती रही तुम कितने बरस से
पन्द्रह पैसे में बेचने को ?
--- कोई नहीं जानता ।
तुम्हारा नाम, उम्र और पता ?
कोई नहीं जानता

--- मृत शिशुओं के लिये प्रार्थना-- कविता लिखने के लिये -प्रणवकुमार बंद्योपाध्याय
--- पृष्ठ- २४ ।

(२) वह घर है या कोठा, जहां एक मोटी सी औरत
लेट जाती है साथ में दो रोटी की खातिर
हर बेटा और बेटी जहां किसी पाप की निशानी

-- आत्म निर्वासन तथा अन्य कविताएँ-- रात पहले पहर में- राजीव-पृ० ४२

(३) एक दिन वहां से निकाल दिया गया कि
पिछले तीन महीनों से
फीस नहीं दे पाया था और
उसके कपड़े गन्दे थे

-- मृत शिशुओं के लिये प्रार्थना-- सुबह की कविता-प्रणवकुमार बंद्योपाध्याय-पृ०४५

(४) भूख और प्यास और हाहाकार में
कितनी ही गोरैया आज शहर बदलेंगी
कितने ही लड़के नहीं जायेंगे क्लास

--- नाटक जारी है-- नगर का मौसम- लीलाधर जगूड़ी- पृष्ठ- ७३ ।

सत्ता की रस्साकशी के अवसर पर जनसाधारण को नहीं भूलता---

> जब समाजवादी दल खोज रहा था लड़के
> मंत्री बनने के लिए अगली सरकार में
> मैं खोज रहा था भीड़ में रामलाल
> वही मिल जाय अगर मेकून मिले १

युवा कवि को मालूम है कि भूख क्या होती है, शोषित जीवन की यातनाएँ उसने झेली हैं, उसे यह भी ज्ञात है कि निर्वस्त्र घूमने में कितनी तकलीफ होती है, उसने करोड़ों देशवासियों की भूख-प्यास के साथ सीधा साक्षात्कार किया है।२ उसकी यह तकलीफ बहुत बड़ी है कि इस देश में नव निर्माण की धूम मच चुकी है लेकिन एक साधारण आदमी आज भी उजड़ा हुआ है, बन नहीं पाया है---

> सब कुछ बन रहा है मेरे देश में
> नगर - - - भवन - - - सड़कें - - - योजनाएँ
> लेकिन निर्माण की इस दौड़ में नहीं बन पाया अब तक
> - - - - - - एक अदद आदमी --- एक अदद आदमी ३

- -

(१) आत्महत्या के विरुद्ध-- भीड़ में मेकू अभीर में-- रघुवीरसहाय- पृष्ठ-४५

(२) मैं जो जानता हूं भूख रोटियों की, नमक और मधु की, मैं जो
जानता हूं पीड़ा आदमियों के बीच निर्वस्त्र
घूमने की, मैं जानता हूं करोड़ों की भूख
और प्यास, मैं जो करोड़ों जीवों के साथ काला पड़ा
डूबता - उतराता हूं इस सागर में
टटोलता हूं अंधकार की परतों को
महसूस करते हुए सारे तारे
--- पहचान २।४ जरत्कारु-- केवल तुम्हारी देह -- कमलेश - पृष्ठ- ६

(३) निषेध- निर्माण-- विनय -- -- पृष्ठ- ५६

३- भविष्य की उपेक्षा

युवा कवि न तो अतीत जीवी है और न उसे भविष्य के दिवास्वप्नों में डूबने - उतराने की आदत ही है। हालांकि वर्तमान बहुत भयावह और कुरूप है फिर भी वह वर्तमान में ही जीना चाहता है। वह अपना परिचय वर्तमान से जोड़कर ही देना चाहता है--

मैं जो वर्तमान हूं
भविष्यहीन अनवरत वर्तमान
अनिश्चय के बहरे क्षणों में
नींव भरकर न उठाई गयी
दीवार की तरह
ईश्वरहीन हो गया हूं १

भविष्य उसके लिए झूठा है २, बल्कि वह कभी था ही नहीं।३ ऐसी स्थिति में अपने उत्तराधिकारी को देने के लिए उसके पास कुछ भी नहीं है। वह अगली पीढ़ी को झूठे आश्वासन और खूबसूरत सपने नहीं देना चाहता क्यों कि उसका वर्तमान इन सबसे महरूम है। इसलिए उसका स्पष्ट कथन है ---

तुम्हारे लिए छोड़ जाता हूं

- -

(१) संक्रान्त-- एक असमाप्त अन्त - कैलाश वाजपेयी - पृष्ठ- २६

(२) और मेरे कण्ठ के सकरे अंधेरे में
झूठे भविष्य का
कफ घरघराता है

--- संक्रान्त : अस्तित्वबोध -- कैलाश वाजपेयी- पृष्ठ- ५३

(३) वर्तमान धुंधला होता जारहा है ?
भविष्य कभी नहीं था
अतीत की परिभाषा खोगयी

--- तलवार : प्रमोदसिन्हा --- --- पृष्ठ- २१

कुछ अंधकार के दर्पण
कुछ टूटे हुए शस्त्र
कुछ आहत पगडंडियां
कुछ कटे हुए फासले
क्षमा करना मेरे उत्तराधिकारी
मेरे पास
इसके सिवा कुछ नहीं था १

किसी प्रकार की भविष्य चिन्ता युवा कविता में नहीं है और यह इस बात को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है कि युवा कविता में भटकनों और संभावनाओं के लिए कोई अवकाश नहीं है। वर्तमान की ठोस वास्तविकता इस कविता के केन्द्र में है।

४- शोषण के प्रति आक्रोश

राजनीतिक, सामाजिक आर्थिक शोषण के विभिन्न पहलुओं को पहचानते हुए उनसे मुक्त होने का आग्रह युवा कविता में बार-बार उभरता है। आदमी को विवश और गुलाम बनाने की पूंजीवादी और साम्राज्यवादी साजिशों से युवा कवि अनभिज्ञ नहीं है। वक्तव्यों, आश्वासनों और प्रलोभनों के जरिये विरोध की धार को कुंठित करने वाले हर प्रयास की असलियत को वह जल्दी ही भांप लेता है। वह पुरानी पीढ़ी के शोषकों को चेतावनी देना चाहता है कि वे जनसाधारण को भ्रम में रखकर अब और अधिक दिनों तक शोषण का कुचक्र नहीं चला सकते। क्षत-विक्षत कोखों से जन्मी हुई पीढ़ियां आज जन्म से पूर्व ही यह जान जाती हैं कि वीणा वादक नहीं, सिर्फ शिकारी बजाते हैं।२ यह स्थिति केवल पढ़े लिखे लोगों

---

(१) आजकल जून १९७० - भविष्यचिन्तन - विश्वनाथ प्रसाद तिवारी-पृ०२७
(२) निषेध-- बंजैल - रमेशगौड़ -- -- पृष्ठ-१८५

की ही नहीं है श्रमजीवी भी अब व्यवस्था के झाँसे में नहीं आता ।१ अब अनाचार को पहचानने और अत्याचार के खिलाफ विद्रोह बोलने के लिए किसी प्रेरणा की जरूरत नहीं होती है । जुझारू पीढ़ी जीवन के हर मोर्चे पर लड़ने लगी है और व्यवस्था की कोई भी कोशिश उन्हें अपने पथ से विलग करने में सफल नहीं हो पारही है ---

अनाचार के विरुद्ध हमारा प्रत्येक क्षण
लड़ाई के मैदान में जूझ रहा है
तुम्हारे स्वर्ण - मृग और लाक्षागृह
हमारी दृष्टि को धुंधला नहीं कर सकते
अब हम चक्रव्यूह के पीछे छिपकर बैठे हुए
चेहरों को देख सकते हैं २

युवा कविता में उन साजिशों का विस्तार से उल्लेख मिलता है जो शोषण के विरुद्ध चल रहे जन युद्ध को ठप्प करने के लिये पैदा की जाती है । चाहे वह अपने अस्तित्व की सुरक्षा के लिये राजनीतिक अवसरवादियों

---

(१) लेकिन बुधुआ ने अपनी कुदाल से
जमीन पर गहरी चोट की
और बीज का नया धरातल
खेत के बीचों बीच उग आया
निर्दिष्ट दिशा के कुत्ते भूंके
व्यवस्था ने सफाई के आंकड़े पेश किए
लेकिन इस बार बुधुआ
वक्तव्यों के दायरे से बाहर था

--- विचार कविता की भूमिका-- वक्तव्यों के दायरे-- वेदनंदन- पृष्ठ- १७७

(२) सुबह होने से पहले -- संधि पत्र पर हस्ताक्षर के विरुद्ध- सव्यसाची-
----- पृष्ठ- ५६ ।

द्वारा छेड़ा गया व्यर्थ का युद्ध[1] हो अथवा शोषण का विरोध करने वालों में फूट डालने की नीति युवा कवि के सामने सब कुछ आइने की भांति साफ है। युवा कवि उनकी जबर्दस्त आलोचना करता है जो शोषकों की भेदनीति को न समझ कर 'मुखबिर'[2] बन गए हैं और उनका आह्वान करता है जो शोषित हैं लेकिन शोषण और अन्याय के खिलाफ युद्ध में शामिल नहीं हैं। ऐसे लोगों को धूमिल जैसे युवा कवि अपनी आदतों में फूलों की जगह पत्थर भरने तथा मासूमियत के हर तकाजे को ठोकर मारने का परामर्श देते हैं। वे उन्हें आश्वस्त करते हैं कि उन्हें अकेले नहीं लड़ना है। उन जैसे लाखों लोग तिलस्म का जादू उतारने के लिए आतुर हैं ---

इसलिए उठो और अपने भीतर
सोये हुए जंगल को
आवाज दो
उसे जगाओ और देखो--
कि तुम अकेले नहीं हो
और न किसी के मुहताज हो
लाखों हैं जो तुम्हारे इन्तजार में खड़े हैं[3]

- -

(१) जब तुम्हारे अनाज के दाने
ईंट पत्थर बन
जमाखोरियों की इमारत हो जायें
इत्मिनान रखो
तब तक छेड़ दिया जायेगा
कोई युद्ध
और युद्ध - - - - ऐसा जादू है
जो तुम्हारे दिमाग में
अंध कूप सा खो जायेगा

--- विचार कविता की भूमिका- युद्धस्तर पर लेख-गोविन्द उपाध्याय-पृ० ११६

(२) कल सुनना मुझे - धूमिल - --- पृष्ठ- नहीं है

(३) संसद से सड़क तक - पटकथा - -- पृष्ठ- १२२-२३

युवा कवि सड़े हुए मंचों के नेपथ्यों को फाड़ देने का हामी है। अत: शोषण और अन्याय प्रधान व्यवस्था में वह आमूलचूल परिवर्तन चाहता है। यदि इसके लिये रक्तपात या ध्वंस भी करना पड़े तो यह भी उसे स्वीकार है।१ व्यक्तिगत या फुट-पुट विद्रोह की बात न करके साठोत्तरी कवि द्वारा संगठित विद्रोह पर बल देना इस बात का प्रमाण है कि उसके शोषण विरोध के पीछे भावना या उत्तेजना का उबाल नहीं है, ठंडे दिमाग से सोच समझकर की गई तैयारी है। हालांकि साठोत्तरी कविता में शोषण मुक्त समाज का 'यूटोपिया' नहीं मिलता फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि उसे शोषण की समाप्ति में संदेह है। शोषण समाप्त होगा भेदभाव की खाई पटेगी लेकिन यह भविष्य की बात है, वर्तमान में तो साठोत्तरी कविता की मुख्य चिन्ता मुक्तिबोध के शब्दों में इस प्रकार व्यक्त हुई है ---

समस्या एक
मेरे सभ्य नगरों और ग्रामों में
सभी मानव
सुखी सुन्दर व शोषण मुक्त
कब होंगे ? २

शोषण विरोध के साथ-साथ साठोत्तरी कवियों में किसी भी प्रकार के वर्ग भेद के प्रति आक्रोश भी मिलता है।

---

(१) आज ध्वंस के लिए मेरी पूरी स्वीकृति है
उड़ने दो पत्ते और टूटने दो डालियां
चरमराने दो तने और उन्मूलित होने दो जड़े
तमोमयी सत्ता की, व्यवस्था की ;
--- आंधी और चांदनी-- यह लो मेरे हस्ताक्षर--'तरुण'--पृष्ठ- २८।
(२) चांद का मुंह टेढ़ा है --

युवा वर्ग की समस्याएँ --::

साठोत्तरी कविता सही मायने में युवा कविता है अत: उसमें युवा वर्ग की तकलीफ और परेशानी का जिक्र होना अस्वाभाविक नहीं है। साठोत्तरी कवियों ने युवा समस्याओं के दो विशिष्ट बिन्दुओं को विशेष रूप से रेखांकित किया है। एक तो उन्होंने पर्याप्त शिक्षा और सामर्थ्य के बावजूद बेरोजगारी का अभिशाप झेलती युवा पीढ़ी की मुश्किलों को न केवल समझा है अपितु उनके लिए जिम्मेदार तत्वों की शिनाख्त भी की है। दूसरा बिन्दु युवा विद्रोह का है जो युवा पीढ़ी की महत्वाकांक्षाओं और स्वप्नों को कुचलने की प्रतिक्रिया में जन्मा है।

स्वतंत्र भारत में जन्मे हुए युवा वर्ग को स्वतंत्रता के नाम पर व्यर्थ की भटकन, निराशा और बेकारी हाथ लगी। राजीव सक्सेना, धूमिल, लीलाधर जगूड़ी और सुरेन्द्र तिवारी की कुछ कविताएँ इस सत्य को अपने-अपने ढंग से कहती हैं। युवा वर्ग को उस राह में चलने की स्वतंत्रता मिली हुई है जिसके हर छोर पर 'नो वैकेन्सी' के साइनबोर्ड टँगे हुए हैं और शोपिंग विण्डो की चकाचौंध अंगूठा दिखाकर हँसती है।1 ऐसी स्थिति में उसकी नये चंदन सी आत्मा घिसते - घिसते मर जाती है।2 जब कभी युवा शक्ति व्यवस्था में

- -

(1) --------- जिनके हर छोर पर। टँगे हुए हैं नो वैकेन्सी' के साइन बोर्ड; साइन बोर्ड, न्योनलाइन, शापिंग विण्डो की। झलमलाती हुई चकाचौंध बुलाती है इशारों से। आँखों में झाँककर हँस देती है अंगूठा दिखाकर।

--- आत्म निर्वासन तथा अन्य कविताएँ-- राहें चलती रहीं -'राजीव'-पृ0 87

(2) आत्मा थी मेरे भी पास। नये चंदन सी। घिसते-घिसते अब। आधी से ज्यादा मर गई। दोनों वक्त रोटी का इन्तजाम करने में। आधी से ज्यादा ही। जिन्दगी गुजर गई।

--- बुझते हुए --- आधी से ज्यादा- सुरेन्द्र तिवारी- पृष्ठ- 61।

बुनियादी परिवर्तन लाने के लिये कसमसाती है तब अपेक्षित निर्देशन के अभाव में प्राय: गुमराह हो जाती है और उसका अपव्यय रेल के डिब्बे जलाने जैसी निरर्थक हरकतों में होता है। धूमिल ने 'भाषा की रात' कविता में इस सब को बखूबी कहा है ---

वे मेरे देश के हम उम्र नौजवान
जिनकी आंखों में
रोजगार दफ्तर की
नौनिहाली ईंटों का अक्स
झिलमिला रहा है -
वे मेरे दोस्त -
किस तेजी से तोड़ना चाहते हैं भाषा का भ्रम
लेकिन रेल का डिब्बा
टूट रहा है।१

युवा शक्ति की आग धुंआ बनकर आंखों को चुभने के बजाय लपट बनकर रोशनी और ऊष्मा क्यों नहीं देती, युवा कवि ने इसके मूल कारणों को सफलता पूर्वक पहचान लिया है। उसके ख्याल में चारों तरफ चक्कर काटता हुआ पूंजीवादी दिमाग है२ जो विद्रोह और समझौते की दोमुंही भाषा एक साथ बोलता है। इसका फल यह होता है कि थोड़ी सी सुविधाओं की लालच के सामने युवा शक्ति कुंठित हो जाती है।३ भारतीय युवा वर्ग में व्याप्त तीव्र असंतोष और आक्रोश

- -

(१) संसद से सड़क तक -- --पृष्ठ-१०२

(२) वही। -- पृष्ठ-१२६

(३) फैसले की हद तक। आते आते रुक जाती है। क्यों कि हर बार। चन्द टुच्ची सुविधाओं की लालच के सामने। अभियोग की भाषा चुक जाती है,

--- संसद से सड़क तक -- पृष्ठ- १२७

का जिम्मेदार प्राय: वर्तमान दूषित शिक्षा प्रणाली को ठहराया जाता है।१ युवा कवि इसके लिए पूंजीवादी शोषण प्रधान व्यवस्था को उत्तरदायी ठहराता है। यह व्यवस्था परिवर्तन नहीं चाहती क्यों कि इससे इसके हितों पर आंच आती है। आज की युवा पीढ़ी ने इसकी साजिशों को पहचान लिया है। अत: कभी वह डिग्री फाड़कर अपना आक्रोश व्यक्त करती है और कभी मुट्ठी तानकर नक्सलवादी बन जाती है। डिग्री और प्रमाण - पत्र युवा पीढ़ी के लिये झूठी तारीख पैदायश की सही तसदीक करने वाले जाली कागज भर हैं---

---तुम्हारे सामने ही
फाड़ फेंकता हूं तुम्हारे मदरसों से मिले ये कागज
(तुम इन्हें दस्तावेज कहते हो)
इनकी कोई उपयोगिता नहीं है सिवा इसके कि
ये मेरी झूठी तारीख - पैदाइश की सही तसदीक करते हैं
ले जाओ यह कागज की लुगदी
यह मेरी भूख नहीं मिटा सकती २

कुछ जागरूक कवियों ने व्यवस्था के प्रति युवा आक्रोश के सार्थकदिशा में बढ़ने की बात कही है। युवा कविता में अभिमन्यु का प्रतीक बहुत लोकप्रिय है। अभिमन्यु के माध्यम से औसतन भारतीय युवा के विरोध को उभारा गया है। युवा कवि का विश्वास है कि आज की सड़ी व्यवस्था के चक्रव्यूह को भेदने के लिए अभिमन्यु आकाश से न उतरकर हमारे भीतर से ही जन्मेगा।३ जो लोग अत्याचार और

- -

(१) नये साहित्य का तर्कशास्त्र-- विश्वनाथप्रसाद तिवारी- पृष्ठ- १३६
(२) हरर जून, १९७२- संवाद: एक तरफा- हेतु भारद्वाज-पृष्ठ-नहीं है।
(३) अन्तत: हमीं में से जन्मेंगे अभिमन्यु
जो हर चक्रव्यूह में घुस
सिंह गर्जन करेंगे।
--- बातचीत-३ नवम्बर, फर०, मई, १९७३-- कटघरे में खड़े आदमी का बयान -- राजकुमार कपूर -- पृष्ठ- ५६ ।

अनाचार को गूंगे की तरह सह लेते हैं ऐसे लोगों को युवा कवि ने चेतावनी और संदेश दोनों एक साथ दिए हैं कि युवा वर्ग स्वार्थों के चक्रव्यूह को ध्वंस करने जा रहा है और वह आश्वस्त है कि किसी भी प्रकार की सुख सुविधाएँ उसके विरोध की आग को ठंडा नहीं कर सकती---

इस युग का अभिमन्यु
तुम्हारी श्रृंखलाओं को तोड़ने के लिए
जिन्दगी को हथेली पर रखकर
स्वार्थों के चक्रव्यूह को ध्वंस करने जा रहा है,
सुख सुविधाओं के फेंके हुए घिनौने टुकड़े
उसकी आग को खरीदकर ठंडा नहीं कर सकते[१]

युवकों के नपुंसक और दिशाहीन विद्रोह को युवा कवियों ने प्राय: भर्त्सना की दृष्टि से देखा है। इस प्रकार के विद्रोही उनकी दृष्टि में अवसरवादी हैं, विद्रोह उनके लिए फैशन भर है। सामान्य सा आघात या भय ऐसे छद्म विद्रोहियों को दुम दबाने के लिए विवश कर देता है ---

सोते विद्रोही की पीठ पर धौल जमाता है सिपाही
--- क्या कर रहे हैं श्रीमन् ! यहां इस समय खड़े-खड़े
इरादे तो नेक हैं
किसी झंझट में न पड़ें-- इस डर से दुम दबाकर
टरक लेता है विद्रोही देखता हुआ[२]

- -

(१) सुबह होने से पहले-- अभिमन्यु के हत्यारों का जन्म- सव्यसाची- -- पृष्ठ- ४२।

(२) विचार कविता की भूमिका-- विद्रोह का स्वप्न - हरदयाल -- पृष्ठ-१८६।

युवा विद्रोह का एक रूप यौन वर्जनाओं के प्रति विद्रोह के रूप में देखा जासकता है। डॉ० गोविन्द रजनीश के अनुसार साठोत्तरी कविता के एक वर्ग का विद्रोह नारी के पाशविक उपभोग तक सीमित रह गया है। कुछ कवियों विशेषत: अकवियों ने युवा वर्ग की तनावपूर्ण मानसिकता की परिणिति यौन विद्रोह में मानी है। हालांकि हिन्दी में भूखी पीढ़ी जैसी कोई पीढ़ी वास्तव में नहीं थी फिर भी बिन्स वर्ग आदि के प्रभावस्वरूप व्यवस्था के प्रति क्षोभ और असन्तोष का समापन बहुत सी कविताओं में नारी की योनि में ही होता है। केशनी प्रसाद चौरसिया की कविताएँ इस संदर्भ में उल्लेखनीय हैं। जहां वे व्यवस्था के विरोध की बात करते हैं वहां यौन प्रतीकों के बगैर उनकी गाड़ी आगे नहीं बढ़ती।१ इस प्रकार का आक्रोश धूमिल के शब्दों में कहें तो 'बढ़ी हुई नदी में एक सड़ा हुआ काठ' से अधिक नहीं है। जगदीश चतुर्वेदी, सौमित्र मोहन, मणिकामोहनी, राजकमल चौधरी, निर्भय मल्लिक, श्रीराम शुक्ल आदि ने योनि के आतंक को युवा वर्ग की एक महत्वपूर्ण समस्या बनाकर पेश किया है। ऐसे कवि बीच-बीच में व्यवस्था के प्रति आक्रोश की एक नकली मुद्रा भी अख्त्यार कर लेते हैं लेकिन उनका नपुंसक आक्रोश छिपता नहीं है और कहीं - कहीं तो आत्मस्वीकारोक्ति के रूप में उभर आता है।२ अशोक वाजपेयी ने युवा लेखकों की यौन

- -

(१) क्या सारी व्यवस्था सुराट वेश्या के
सिफलिस सड़े अंग विशेष सी नुची - चिथी बजबजा नहीं
चुकी। --- केशनी प्रसाद चौरसिया

(२) एक पहाड़ में छेद करने की इच्छा बहुत बार हुई और
मैंने एक पैने चाकू से अपनी हथेली पर ही वार कर दिया है
+ + +
चिनचिनी औरतों के लिए सुरक्षित, मैं तो अपनी खोल में मस्त हूं।
निषेध-- समकालीन आलोचकों के नाम -- जगदीश चतुर्वेदी- पृष्ठ- ३३

आक्रामकता का रहस्य उसकी कस्बाई संवेदना और महानगरीय परिवेश की वास्तविकता के बीच के गैप में खोजा है। युवा कवि इस खाई को पहचान कर सामाजिक स्तर पर इस स्थिति को जैसे छुपाने के लिए अपनी रचनाओं में एक असंभव 'टीन एज' की दुनिया बसाता है 'स्त्री यौन-सम्बन्ध, प्रेम आदि को लेकर जो 'जीभ और जांघ का चालू भूगोल' इन रचनाओं में नजर आता है वह शायद सामाजिक स्तर पर अपने पिछड़े होने के अहसास को सम्बन्धों में आक्रामकता और उग्रता द्वारा दुरुस्त करने की कोशिश की ही एक परिणति है।१ यह सत्य है कि युवा विद्रोह की उपर्युक्त रोमानी परिणति के लिए कवियों की मानसिक बनावट अधिक जिम्मेदार है। इनकी ऐसी रचनाएँ समूचे युवा वर्ग की नियति को रेखांकित करने के बजाय आक्रामक मुद्रा में निजी बातें कहने में ज्यादा विश्वास रखती हैं।

घ- विचार तत्व की प्रधानता

साठोत्तरी कविता का मिजाज, मुहावरा और रचना विधान पूर्ववर्ती कविता से इतना बदला हुआ है कि इसे कविता के पुराने और प्रचलित अर्थ में कविता नहीं कहा जा सकता/इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि कविता की 'वस्तु' पूरी तौर पर बदल गई है। पहले जहां कविता के केन्द्र में अनुभूति हुआ करती थी वहां अब विचार प्रतिष्ठित हो चुका है। विचार की प्रधानता को लक्ष्य करके विचार कविता जैसी अवधारणा प्रस्तुत की गई। विचार कविता की भूमिका प्रस्तुत करते हुए डॉ० नरेन्द्रमोहन ने लिखा था कि 'काव्यानुभव में भावना का योग अब उतना नहीं रहा जितना विचार का। कविता की भावना मूलक प्रकृति संवेदना को रोमैंटिक भावावेश में बदल देने और ठोस संदर्भों को धुंधला देने के कारण अनावश्यक और अप्रासंगिक लगने लगी है और इसी से कविता का भावमूलक आधार भी

(१) पिछ्ला - --- पृष्ठ- १५

मोथरा और अतिरंजित लगने लगा है।'१ यहां यह स्पष्टीकरण आवश्यक है कि विचार को महत्व देने का अर्थ यह नहीं है कि कविता में अनुभव की प्रामाणिकता अब नहीं रही। वास्तव में अनुभव और विचार एक दूसरे में अन्तर्प्रवेश पाकर ही कविता को ताकतवर बना सकते हैं और उसे व्यवस्था या तंत्र के खिलाफ खड़ा कर सकते हैं।२ अनुभूति के साथ विचार की महत्ता को रेखांकित करते हुए डॉ० रामदरश मिश्र कहते हैं कि 'जो कवि अपने व्यापक और सघन अनुभवों के साथ अपनी वैचारिकता को जितनी कलात्मकता और तनाव के साथ बुन सकेगा वह उतना ही वजनदार कवि होगा क्यों कि वह केवल अनुभवों का संयोजन मात्र नहीं करेगा उनके साथ-साथ जीवन के बुनियादी प्रश्नों और मूल्यों के प्रति हमारी समझदारी और पहचान भी विकसित करेगा'।३ आज की कविता में विचारों पर बल देने के मूल में वर्तमान जीवनगत संदर्भों की जटिलता है।४ इन जटिल संदर्भों से प्रेरित और निर्मित होने से काव्यगत संवेदनाएँ भी जटिल होगई हैं जिन्हें वैचारिकता के परिप्रेक्ष्य में ही देखा, समझा और अभिव्यक्त किया जा सकता है। न केवल विचार कविता अपितु अकविता और प्रतिबद्ध कविता से सम्बन्धित अधिकतर कवियों ने कविता में विचारतत्व को प्रमुखता दी है। पाश्चात्य विद्वान देकार्त ने 'Cogito Ergo Sum' 'अर्थात मैं विचार करता हूं इसलिए मैं हूं' कहकर मानवअस्तित्व के लिए विचार को पहिले महत्व दिया है। जब धूमिल लिखते हैं कि 'एक सही कविता। पहले। एक सार्थक वक्तव्य होती है' तब उनका आशय किसी भावुक अथवा उत्तेजक वक्तव्य से न होकर विचार पूर्ण वक्तव्य से होता है। युवा कवि ऋतुराज भी अपनी

- -

(१) विचार कविता की भूमिका - -- पृष्ठ- ११

(२) वही। --- -- पृष्ठ- १३

(३) मधुमती दिसम्बर, १९७६-- कविता में अनुभूति और विचार-पृष्ठ- १६

(४) 'साम्प्रतिक काव्य के अन्तर्गत अतिशय वैचारिक आग्रह का प्रधान कारण आधुनिक जीवनगत संदर्भों की जटिलता है।'
विचार कविता की भूमिका- श्यामनरायन -- पृष्ठ-८३

कविता के संदर्भ में विचार तत्व को प्रमुखता देते हुए लिखते हैं कि 'मेरे लिये हरेक कविता एक लाइन-आफ-थाट से पैदा होती है, जो अपनी पूरी बात कहकर एक लाइन-आफ-ऐक्शन को स्पष्ट करती है।'१

साठोत्तरी कविता का विचार तत्व इतिहास, दर्शन या अन्य किसी क्षेत्र से सम्बन्धित न होकर समसामयिक जीवन से सम्बन्धित है। वर्तमान जीवन की विसंगतियों, जटिलताओं और विद्रूपताओं को उधेड़ते हुए कवियों ने जो कविता गढ़ी है उसमें अनुभव पर आधारित विचार केन्द्र में है। 'विचार की पहली काव्यात्मक शुरुआत व्यंग्य (सेटायर) से हुआ करती है जो धार्मिक तथा दार्शनिक गम्भीरता का मुकाबला करता है।'२ युवा कवि ने समाज के उन वर्गों पर व्यंग्य की कड़ी चोट की है जो न्याय और व्यवस्था के तथाकथित रक्षक हैं। लेकिन स्वयं उनके लिये शासन और न्याय का बंधन नहीं के बराबर है। धूमिल ने ऐसे दोहरे प्रतिमानों से लैस सुविधाजीवी लोगों को कानून की भाषा बोलने वाला अपराधियों का संयुक्त परिवार कहकर संबोधित किया है।३ कैलाश वाजपेयी ने भी राजनयिक के आत्म कथन के माध्यम से इसी विडम्बना पर प्रहार किया है।--

गांधी का शिष्य मैं
कोई अनुशासन, कानून नहीं मानता
दर असल
मैं बुरी तरह स्वतंत्र हूं।४

---

(१) आवेग-६ अगस्त, १९७२ --- पृष्ठ- ६

(२) विचार कविता की भूमिका- रमेश कुंतल मेघ - पृष्ठ- ७५

(३) वे वकील हैं। वैज्ञानिक हैं।
अध्यापक हैं। नेता हैं। दार्शनिक
हैं। लेखक हैं। कवि हैं। कलाकार हैं।
यानि कि ---
कानून की भाषा बोलता हुआ
अपराधियों का एक संयुक्त परिवार है।
--- संसद से सड़क तक -- पटकथा - पृष्ठ- १३९।

(४) देहान्त से हटकर--- एक नया राष्ट्रगीत -- पृष्ठ- १३३।

साठोत्तरी कवियों की वैचारिकता मुख्यत: व्यवस्था विरोध से सम्बद्ध है। व्यवस्था विरोध के उत्साह में कभी-कभी उनके विचार अतिरंजित और एकांगी प्रतीत होते हैं। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व्यवस्था में हो रहे धीमीगति में परिवर्तन को लक्ष्य न करके सभी स्थितियों का मज़ाक उड़ाना तथा तथा-कथित समाजवाद की भर्त्सना करना और मौजूदा लोकतंत्र कीसार्थकता पर प्रश्न चिन्ह लगाते चले जाना प्रबुद्ध और सुचिन्तित वैचारिकता के विपरीत पड़ते हैं। बहुत कम कवि विचारों की स्फीति और एकांगिता से बच सके हैं। क्षिक कविता में जहां विचार शुद्ध विचार के रूप में आया है वहां कविता, कविता नहीं रह गई है परन्तु जहां विचार प्रेरक के रूप में आया है वहां उसने जीवन की जटिलताओं को अच्छी तरह से उभारा है। अपने को मार्क्सवादी कहने वाले प्रतिबद्ध कवियों की वैचारिकता भी उत्तेजक और अतिरंजना पूर्ण अधिक है। धूमिल, वेणुगोपाल आदि की कुछ रचनाएँ प्रमाण स्वरूप देखी जा सकती हैं। कुछ कवियों ने विचारों का प्रयोग कविता के प्रस्थान बिन्दु के रूप में किया है जो कि निश्चय ही एक एकांगी और ह्रासशील प्रवृत्ति है।१ इस प्रकार की विचार वाली कविताएँ कविता की वस्तु को अनुभवगम्य और सम्प्रेष्य बनाने के स्थान पर अवास्तविक बनाने में सहयोग देती हैं।

परिवेशगत दबाव के कारण जो सामाजिक कुरूपताएँ उपजी हैं, जीवन के विभिन्न संदर्भों में अनेक प्रश्न तथा समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं, वे विचार की भूमि पर ही आधारित हैं। साठोत्तरी कवियों ने जीवन से सीधा साक्षात्कार किया है।उनमें परिवेश की पकड़ बहुत गहरी है। अत: उनमें परिवेश की भयावहता के कारण अनुभूति जैसे नैपथ्य में पड़ गई है तथा विचार मंच पर स्थापित होगया है। युवा कवि की कविताओं को पढ़ने के पश्चात् पाठक रमता कम है विचार अधिक करता है।

- -

(१) विचार कविता की भूमिका-- चन्द्रभूषण तिवारी-- पृष्ठ- ६१

६०- साठोत्तरी कविता में सौन्दर्य - निरूपण

सौन्दर्य बोध बदल जाने[1] की बात नयी कविता के उत्कर्षकाल में कही गयी थी और इस बदलाव को एक नयी शुरुआत से जोड़ने का सिलसिला शुरू हुआ था। उसी समय हिन्दी समीक्षा में साहित्यिक सौन्दर्यबोध के क्षेत्र में वैयक्तिक अनुभूति के विशिष्ट क्षणों और सामाजिक जीवन के विशिष्ट मूल्यों के संतुलन[2] पर जोर दिया गया था। नये कवि ने परम्परा भंजन के नाम पर जो सौन्दर्यबोध अपनाया था उसमें उनकी अपनी कुंठाएँ अधिक मुखर थीं। डॉ० गोविन्द रजनीश के नयी कविता के इस नये सौन्दर्यबोध की उचित आलोचना करते हुए लिखा है : 'उनका सौन्दर्यबोध यौनाशय, आमाशय, गर्भाशय, फ्रीचलेंदर, टेस्ट-ट्यूब, महगाई, लिपिस्टिक, बोतल, हींग, हल्दी, चितकबरी रात में ही उलझ गया है। वह वस्तुतः सौन्दर्यबोध न रहकर विकृति बोध होगया है'।[3] इस विकृतिबोध का विरोध होना स्वाभाविक था। युवा कवि ने कविता के सौन्दर्य को अनुभूतिगत ईमानदारी और अभिव्यक्तिगत सचाई में मानते हुए उस सौन्दर्य के सामाजिक दायित्व की ओर भी संकेत किया है। 'अगली कविता' के घोषणा-पत्र में भी कविता के माध्यम से शाश्वत सौन्दर्यबोध को मानवबोध से जोड़ने की

---

(१) 'कविता का मूल सौन्दर्य उसकी अनुभूतिगत ईमानदारी और अभिव्यक्तिगत सचाई में है परन्तु मैं मानता हूं कि कविता का एक सामाजिक दायित्व भी होता है।'

प्रक्रिया--- कविता : रचना-प्रक्रिया - रामदरश मिश्र - पृष्ठ- १६

(२) जिस समाज में हम रहते हैं, उसके द्वारा प्रदत्त अथवा उत्सर्जित भाव-परम्परा तथा मूल्यों से विच्छिन्न होकर, सृजन प्रक्रिया के अंग भूत मूल्यों का अस्तित्व ही नहीं हैं।

नयी कविता का आत्म संघर्ष तथा अन्य निबंध- मुक्तिबोध- पृष्ठ- ५७

(3) समसामयिक हिन्दी कविता विविध परिदृश्य- -- पृष्ठ-१०२

बात कही गई है ।१

(i) सौन्दर्यानुभूति और सामाजिक दायित्व :-

युवा कविता में पहली बार कवि की निजी सौन्दर्यानुभूति को सामाजिक दायित्व के साथ जोड़कर प्रस्तुत किया गया है । इसके पहले खड़ी बोली की कविता में इस प्रकार का संतुलन शायद ही कभी रहा हो । छायावाद में निराला को छोड़कर अधिकतर कवियों में इस सौन्दर्य का सूक्ष्म और अतीन्द्रिय निरूपण सामाजिक जवाबदेही की उपेक्षा करता है । प्रगतिवाद में सामाजिक दायित्व का बोध तीव्र और मुखर है लेकिन वहां उन्मुक्त और वैविध्यपूर्ण सौन्दर्यानुभूति अनुपस्थित है । प्रयोगवाद और नयी कविता जीवन के सौन्दर्य को व्यक्तिगत सन्दर्भों में देखते और आंकते हैं लेकिन यह सौन्दर्यानुभूति समाज सापेक्ष नहीं है अत: सौन्दर्य निरूपण की दृष्टि से युवा कवि की कविता अपेक्षाकृत स्वस्थ और संतुलित लगती है ।

युवा कवियों ने 'जीवन में जहां भी सौन्दर्य देखा है वहां अभावों और कठिनाइयों की कुरूपता भी पृष्ठभूमि में अंकित हो उठी है ।' केवल सौन्दर्य के लिये सौन्दर्य का चित्रण युवा कविता की प्रवृत्ति नहीं है अत: युवा कवि कैक्टस और अमावस्या में भी सौन्दर्य ढूढ़ लेता है ।२ प्रकृति का

---

(१) इसीलिये 'कविता' के माध्यम से शाश्वत सौन्दर्य भाव-बोध को आस्था-बोध के रूप में प्रस्तुतकर 'अगली कविता' के स्वरों का जन्म मानव को मानव-बोध का सन्देश है'

--- अगली कविता--१ - ओ०रू०सा० -- पृष्ठ- ५

(२) खुशी के इन्द्रधनुषी रंग
जब सामने आते हैं
तो फीके लगते हैं
कैक्टस
अमावस्या
और उपेक्षा
यही सब लुभाते हैं

--- अगली कविता--१ - 'क्रम' मदन केवलिया - पृष्ठ- १०

सौन्दर्य युवा कवि को बांधता है लेकिन परिवेश की कटुता उस सौन्दर्य में डूबने नहीं देती । रवीन्द्रनाथ त्यागी की 'शाम को रिज पर से' कविता में फौजी कसाई घर और चमकते चांद के माध्यम से आज के बदलते सौन्दर्य-बोध की ओर संकेत किया गया है यहां फौजी कसाई घर परिवेश का प्रतीक है और चांद परम्परागत सौन्दर्य का । दोनों को मिलाकर देखना वाकई एक अजीब अनुभव है ---

चौराहे से बच लूं बाई ओर
वहां से फौजी- कसाई घर के ऊपर चांद फिर चमकेगा
कितना अजीब लगता है
इन दोनों को देखना एक साथ-१

इसी तरह का अजीब अनुभव ऋतुराज की 'क्या है' कविता में है । कवि को सूर्यास्त आते हुए बुढ़ापे की तरह बड़ा कष्टप्रद लगता है ।२ ऋतुराज के लिए सुन्दरता को आज के भयावह परिवेश के आतंक से अलग रखना संभव नहीं है --

और सुन्दरता को असली आतंक से अलग
रखना । क्या मेरे लिए यह संभव है ?
नहीं
क्यों कि अगर ऐसा हुआ तो हर समाचार
युद्धोपरान्त गाये यशगान सा लगेगा ३

परिवेश के बदल जाने का परिणाम यह हुआ है कि न तो अब सुबह गुलाबी लगती है और न दोपहर चमकदार । हवा धूप आदि भी अपने-

---

(१) अकविता - १ --- पृष्ठ- ११

(२) सूर्यास्त तुम्हें सुन्दर लगता है
लेकिन सूर्यास्त बड़ा कष्टप्रद होता है
आता हुआ बुढ़ापा ।
--- विचार कविता की भूमिका -- -- पृष्ठ- १८४

(३) वही । -- पृष्ठ- १८५

अपनी परम्परागत सौन्दर्य को छोड़कर जीवन की नंगी वास्तविकताओं से संपृक्त दिखाई देते हैं। दुष्ट सुबह, बीमार दोपहर और बदगर्द हवा [1] में अब सुन्दरता न होकर जीवन को विरूप और कुरूप बनाने की चालाकी घुली हुई है। युवा कवि इस बदलते सौन्दर्य बोध को यथा संभव वास्तविक रूप में प्रस्तुत कर रहा है। वह देखता है कि परिवेश के इन्द्र धनुषी रंग बड़ी तेजी से गायब होते जा रहे हैं और उनके स्थान पर एक मनहूस कालापन घिरता आ रहा है।[2] यह कालापन व्यक्ति की विवशता है और परिवेश की भयानकता। इस परिवेश की कुरूपता के बीच आत्मीयता का सौन्दर्य भी कभी-कभी उभरता है[3] लेकिन ऐसे अवसर कम ही आते हैं।

ii) सौन्दर्य बोध: बदलते प्रतिमान::--

कैलाश वाजपेयी की कविताओं के संदर्भ में मत्स्येन्द्र शुक्ल ने एक पते की बात कही है कि सौन्दर्य बोध के मटमैले चित्र जो पुराने होने के साथ रूमापन के नज़दीक पहुंच चुके हैं उन्हें ज्यादा समय तक स्वीकारते रहना खतरे से खाली नहीं है।[4] युवा कवि को इस खतरे की पहचान है अत: वह नारी और प्रकृति के आकर्षक चित्रों के एल्बम नहीं गढ़ता है। औरतें उसके

- -

(१) सुबह। उजाला लेकर घर में घुसती है। और कमरों को नंगा। कर लौट जाती है। एक उदास दोपहरी घंटों रोती रहती है बीमार सी। हवा अब सांसों को सांसों तक। नहीं पहुंचाती। बीच में स्वयं ही उसे पी जाती है।
--- विग्रह -- विपर्यय - रामदरश मिश्र -- पृष्ठ- १६

(२) विचार कविता की भूमिका - 'रैन बसेरा' -- बलदेव वंशी - पृष्ठ-१०६

(३) सुबह की भेजी हुई। गाय पर। गोधूली में धब्बे लगे मिलते हैं। हरशाम। तीन बरस की बच्ची। (मेरी)। मुस्कान के गंगाजल से धो देती है उन्हें।
--- अगली कविता-२ 'एक भाव' -- कृष्णबिहारी सहल - पृष्ठ- ७

(४) हिन्दी-साहित्य - विविध प्रसंग -- पृष्ठ- १६२

लिए अंधाकूप्प उमस भरे खेल[1] से ज्यादा नहीं है और मौसम कभी उसे छिनाल, कभी आवारा और कभी शोहदा[2] लगता है। युवा कवियों की कुछ कविताएँ ऐसी हैं जिनमें जीवन के आसपास के सौन्दर्य को रंग बोध के जरिए देखा गया है। इस प्रकार की अच्छी कविताएँ नयी कविता के समर्थ कवि शमशेर बहादुर सिंह ने काफी लिखी हैं। शमशेर का रंगबोध बड़ा सूक्ष्म और सटीक है।[3]

साठोत्तरी कवियों के सौन्दर्य निरूपण के संक्षिप्त विवेचन से इस निष्कर्ष पर पहुंचना असंगत नहीं है कि उन्होंने सौन्दर्य को स्वत: मूल्य के रूप में स्वीकार नहीं किया है। उनके लिए सौन्दर्य वस्तु का एक गौण और अमहत्वपूर्ण अंग है। अनेक समर्थ कविताओं में नारी, प्रकृति आदि की सुन्दरता बिलकुल अनुपस्थित है। वस्तु और भाव के सौन्दर्य के स्थान पर विचारों का सौन्दर्य अधिक है। सौन्दर्य के जो चित्र मिलते हैं उनके साथ सामाजिक प्रतिबद्धता का भाव अनिवार्य रूप से जुड़ा हुआ है। बिम्ब वादियों की तरह केवल सौन्दर्य के लिए कुछ पंक्तियां गढ़ देना युवा कवियों की रुचि के प्रतिकूल पड़ता है। सूक्ष्म वायवीय और अतीन्द्रिय सौन्दर्य चित्रण से प्राय: रहित युवा कविता का सौन्दर्यबोध पूर्ववर्ती नयी कविता के सौन्दर्य निरूपण की तुलना में अधिक स्वस्थ, व्यापक और प्रासंगिक है। लोक-जीवन के सौन्दर्य चित्रों से न केवल साठोत्तरी कविता की जन-जीवन से निकटता प्रमाणित होती है अपितु उसकी ताजे और कुंठा विहीन सौन्दर्य के प्रति रुझान की पुष्टि भी होती है।

- -

(१) औरतें। अंधाकूप्प। उमसभरा खेल हैं। आप तैर जाएँ तो जाएँ। ईश्वर के लिए। उग नहीं आएँ

--- तीसरा अंधेरा --- नियोजन -कैलाश वाजपेयी- पृष्ठ- ६६

(२) एक शोहदा मौसम नौंचले गया है। कदावर सोच

--- विचार कविता की भूमिका-- राजीव सक्सेना -- --- पृष्ठ-१२६

(३) गेरुई आग। लाल गेहुई। सुलग। - - -। बैंगनी खून में आसमान। दौड़ता-सी बैसे।

---- कविताएं १९६४- गेरुई आग --- --- पृष्ठ- १४०-४१

निष्कर्ष::-

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जीवन-मूल्यों का विघटन, वामपंथी राजनीतिक चेतना और विचार तत्व की प्रधानता साठोत्तरी कविता की 'वस्तु' के तीन प्रमुख आयाम हैं। युवा कवियों ने कुलीनता, जातिगत श्रेष्ठता, परम्परागत आर्थिक शोषण आस्तिकता, राष्ट्रीयता आदि जीवन-मूल्यों के विघटन को बड़े उत्साह के साथ चित्रित किया है। नैतिक वर्जनाओं और निषेधों के प्रति भी उनकी काव्य-दृष्टि पर्याप्त आक्रामक है। गलत और अप्रासंगिक मूल्यों के स्थान पर बन्धुत्व, सहयोग, शोषण का विरोध, क्रान्ति आदि मूल्यों को उन्होंने अपना समर्थन दिया है। कुछ अकविता सम्प्रदाय के कवियों ने स्वच्छन्द भोग, अकेलापन और अजनबीपन आदि को मूल्य स्तर पर प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया है। लेकिन उनका स्वर बड़ा क्षीण है। नये मूल्यों की स्थापना करने में युवा कवि प्रयत्नशील हैं।

राजनीति को कविता की वस्तु में समाहित करने के प्रश्न पर नयी कविता के युग में जो द्वन्द्व था वह साठोत्तरी हिन्दी कविता तक आते - आते एक विवादहीन निर्णय की स्थिति में पहुंच लेता है। चाहे प्रगतिशील कवि हैं। चाहे अकवि सभी निर्द्वन्द्व होकर राजनैतिक प्रश्नों को उठाते हैं। साठोत्तरी कविता कीराजनीतिकचेतना वामपंथी की ओर उन्मुख है। अधिकतर कवि यहां तक कि अकवि भी वामपंथी राजनीति के प्रति अपना रुझान प्रकट करते हैं। धूमिल, लीलाधर जगूड़ी, कुमार विकल, सव्यसाची, ज्ञानेन्द्रपति, ऋतुराज, चन्द्रकान्त देवताले आदि कवियों का बहुत बड़ा वर्ग देश विदेश की समकालीन राजनीति की मीमांसा करते हुए इस निष्कर्ष पर पहुंचता प्रतीत होता है कि केवल वामपंथ ही राजनीति की सही दिशा है और इसी के जरिये पूंजीवादी और साम्राज्यवादी ताकतों के शोषण को दूर किया जा सकता है। युवा

कवियों ने गणतांत्रिक व्यवस्था को प्राय: संदेह की दृष्टि से देखा है। वे इस व्यवस्था की उपलब्धियों से असंतुष्ट और इसकी न्यूनताओं से चिंतित प्रतीत होते हैं अत: वे मौजूदा व्यवस्था के स्थान पर समाजवादी शोषणहीन व्यवस्था का विकल्प रखते हैं।

साठोत्तरी कविता की वस्तु विचार प्रधान है। इसमें जीवन के बहुमुखी यथार्थ को बिम्बों, प्रतीकों या फंटेसी के जरिये न उभारकर प्राय: विचार या रैटारिक के माध्यम से बुना गया है। एक ओर इसमें आम आदमी के दु:ख, दर्द की अभिव्यक्ति है तो दूसरी ओर शोषण और वर्ग-भेद के प्रति तीखा आक्रोश। इसकी वस्तु में प्रकृति प्राय: अनुपस्थित है अत: इसका सौन्दर्य-बोध भी मानव जीवन के इर्द-गिर्द ही घूमता है। कुल मिलाकर साठोत्तरी कविता की वस्तु प्रामाणिक अनुभवों और प्रगतिशील जीवन दृष्टि के तालमेल से गढ़ी गई है। यह पूर्ववर्ती कविता की वस्तु के मुकाबले में जीवन के अधिक निकट और विश्वसनीय है।